कष्टों का नदिान

और

आंतरकि दृष्टि

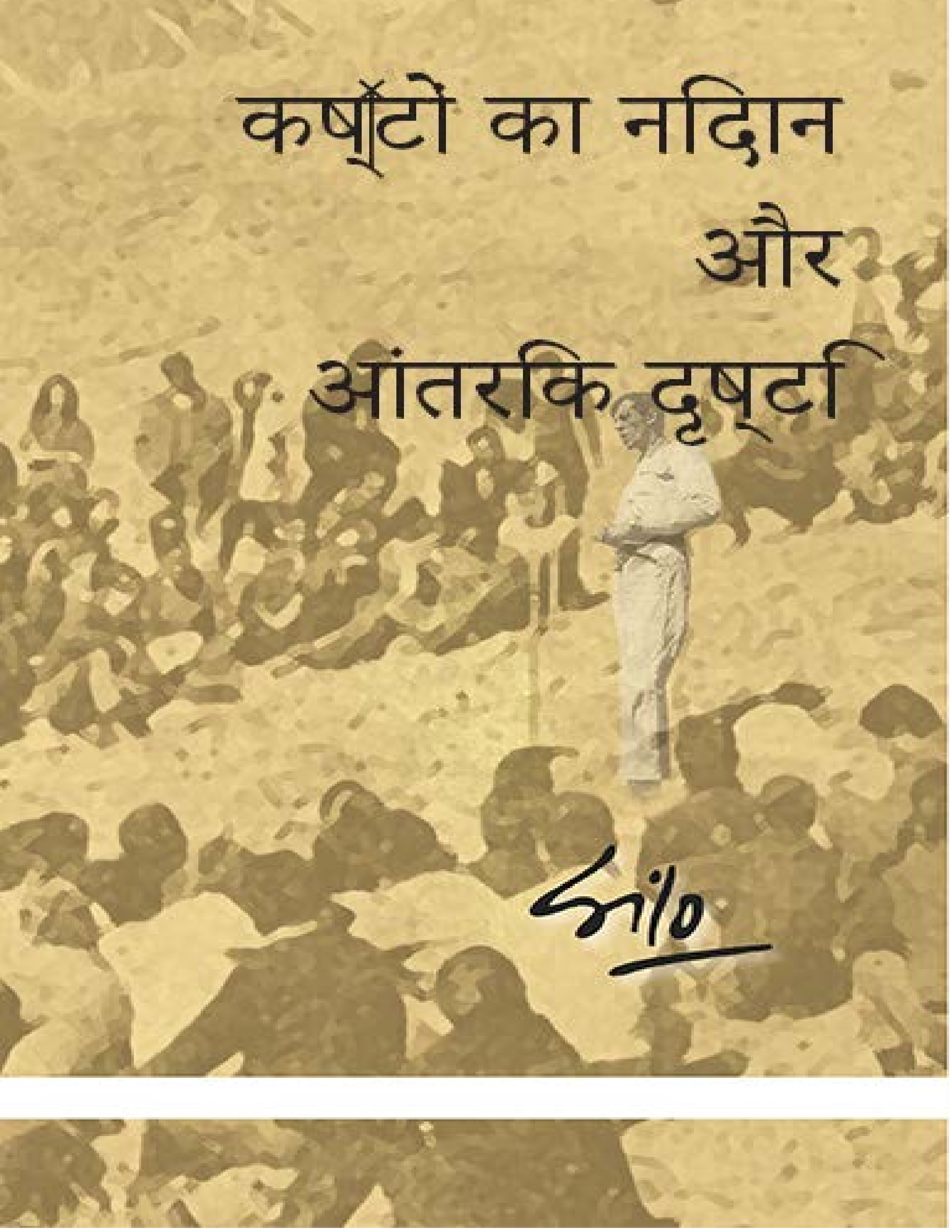

Silo

कष्टों का निदान

और

आंतरिक दृष्टि

सिलो

सिलो

कष्टों का निदान

और

आंतरिक दृष्टि

कष्टों का निदान

आंतरिक दृष्टि

© सिलो

संपादक: मारियो गासेल रोखास

आईएसबीएन: 978-9930-529-83-6
डिजिटल और प्रिंट संस्करण:

एडिनेक्सो ई.आई.आर.एल

सान खोसे, कोस्ता रिका,

दूसरा संस्करण, नवंबर 2016

www.signewords.com

सूची

प्रस्तुत संस्करण की भूमिका

I. ध्यान

II. समझने की इच्छा

III. अर्थहीनता

IV. निर्भरता

V. आशय से जुड़ा संदेह

VI. स्वप्न तथा जागरण

VII. ऊर्जा की उपस्थिति

VIII. ऊर्जा का नियंत्रण

IX. ऊर्जा का प्रदर्शन

X. सार्थकता का प्रमाण

XI. प्रकाशमान अंतस्

XII. अन्वेषण

XIII. आरंभ

XIV. आंतरिक पथ का प्रदर्शक

XV. शांति की अनुभूति तथा ऊर्जा का पथ

XVI. ऊर्जा का विस्तार

XVII. ऊर्जा का लोप तथा नियंत्रण

XVIII. ऊर्जा की क्रिया एवं प्रतिक्रिया

XIX. आंतरिक अवस्थाएं

XX. अंतस् की वास्तविकता

सिलो की टिप्पणियाँ और संदेश

कष्टों का निदान

आंतरिक दृष्टि

दूसरे (प्रस्तुत) संस्करण की भूमिका

लैटिन अमेरिकी चिंतक मारियो लुईस रोद्रिगेस, सिलो, (6 जनवरी 1938 से 16 सितंबर, 2010) के ''कष्टों का निदान'' नामक प्रबोधन तथा ''आंतरिक दृष्टि'' नामक पुस्तक समेत दोनों रचनाओं का एक ही खंड में प्रकाशन सिलो के द्वारा की गई व्याख्याओं से ही प्रेरित है। सिलो की ही पुस्तक 'संदेश' को इन उल्लिखित रचनाओं: ''कष्टों का निदान'' नामक प्रबोधन तथा ''आंतरिक दृष्टि'', की भूमिका के तौर पर लिया जा सकता है।

''कष्टों का निदान'' को 'सिलो कहता है' तथा ''आंतरिक दृष्टि'' को 'पृथ्वी का मानवीकरण' नामक पुस्तक से लिया गया है, जो दोनों ही 'मानवता पर नया संचयन' के तहत प्रकाशित हुए हैं।

एदुआर्दो मोंखे

कष्टों का निदान

पुंता दे बाकास, मेंदोसा, अर्जेंटिना

4 मई, 1969

प्रबोधन

यदि आप किसी आदमी को यह कहते सुनें कि बुद्धिमत्ता संचरित होने वाली चीज है, तो समझ लीजिए कि आप रास्ते से भटक गए हैं, क्योंकि यह न तो पुस्तकों से और न ही उत्साह बढ़ाने वाले भाषणों के जरिए संचरित होने वाली चीज है; सच्ची बुद्धिमत्ता ठीक उसी प्रकार आपके विवेक की गहराइयों में होती है, जैसे सच्चा प्रेम आपके हृदय की गहराई में वास करता है।

यदि आपको निंदक या कपटी लोगों द्वारा उस व्यक्ति को इस उद्देश्य से सुनने के लिए प्रवृत्त किया जाय कि बाद में आप उसकी सुनाई बात का प्रयोग उसी के विरोध में तर्क के रूप सकें, तो समझ लीजिए कि आप गलत मार्ग पर आ गए हैं, क्योंकि वह व्यक्ति न तो आपसे कोई अपेक्षा करता है, न ही उसे आपका इस्तेमाल करना है, यूं उसे आपकी जरूरत नहीं है। तब आप ऐसे व्यक्ति को सुन रहे होते हैं जो ब्रह्मांड का नियमन करने वाले नियमों से अनभिज्ञ है, जो इतिहास के नियमों को नहीं जानता है, जो लोक-व्यवहार को चलाने वाले संबंधों से अपरिचित है। वह व्यक्ति शहर से तथा अपनी बीमार महात्वाकांक्षाओं के बिंदु से चलकर काफी अधिक दूरी पूरी कर आपके विवेक तक पहुंचता है। शहरों, जहां प्रत्येक दिन मृत्यु के हाथों कत्ल की गई एक इच्छा होता है; जहां प्यार की परिणति नफरत होती है; जहां क्षमा प्रतिशोध का रूप धर लेती है; उन्हीं, ढेर सारे अमीर और गरीब लोगों वाले शहर में; मनुष्यों के उन्हीं विशालकाय प्रांगणों में, कष्ट और तकलीफों का परदा लहराता रहता है।

आप कष्ट से उस वक्त गुजरते हैं जब दर्द आपके शरीर को काटता है। आपको तकलीफ तब होती है जब भूख आपके शरीर को कब्जे में ले लेती है। लेकिन आप सिर्फ शरीर के तात्कालिक दर्द, शरीर पर हावी भूख के कारण कष्ट नहीं झेलते हैं। बल्कि आप अपने शरीर के रोगों के दुष्परिणामों के चलते भी कष्ट के भागी होते हैं।

आपको दो प्रकार के कष्टों के बीच अंतर करना चाहिए। पहले प्रकार का कष्ट वह होता है जो आप तक किसी रोग के जरिए पहुंचता है (जिस पर वैज्ञानिक विकास

के जरिए ठीक वैसे ही विजय पाया जा सकता है जैसे न्यायतंत्र के अस्तित्व के चलते भूख पर)। दूसरे प्रकार के कष्ट वे होते हैं जो आपके शरीर की बीमारियों पर निर्भर नहीं करते किंतु उनसे उत्पन्न हुए होते हैं: यदि आप अशक्त (विकलांग) हैं, यदि आप देख या सुन सकने में अक्षम हैं, तो आप कष्ट झेलते हैं; लेकिन, हालांकि इस प्रकार के कष्ट आपके शरीर अथवा शरीर के रोगों द्वारा जनित होते हैं, इस प्रकार के कष्टों का संबंध आपके मष्तिष्क से होता है।

एक प्रकार कष्ट वह होता है जो न तो विज्ञान के विकास से कम होता है न ही न्याय तंत्र की समृद्धि से। ऐसे कष्ट, जो पूरी तरह से आपके मष्तिष्क से जुड़े होते हैं, उनका क्षरण आस्था, आदंदमय जीवन तथा प्रेम के समक्ष होता है। आपको यह जरूरी तौर पर जानना चाहिए कि ऐसे कष्ट हमेशा उस हिंसा पर आधारित होते हैं जिसका वास आप ही की चेतना में होता है। आप कष्ट का अनुभव इसलिए करते हैं क्योंकि आप अपने पास मौजूद चीजों को खोने से डर रहे होते हैं अथवा खो चुकी चीजों के कारण कष्ट महसूस करते हैं अथवा उस चीज के लिए दुखी होते हैं जिसे आप हासिल कर लेना चाहते हैं। आप किसी चीज के पास न होने अथवा आमफहम डर के चलते कष्ट महसूस करते हैं। इंसान के सबसे बड़े शत्रुओं के नाम इस प्रकार हैं; बीमार होने से भय, गरीबी से भय, मौत से भय तथा एकाकीपन से भय। यह सब आपके अपने ही मष्तिष्क से उपजने वाले कष्ट हैं; यह सब आपके अंदर की हिंसा को उजागर करते हैं, वह हिंसा जिसका वास आपके मष्तिष्क में है। गौर करने वाली बात यह है कि इस हिंसा का संचालन हमेशा इच्छा अथवा आकांक्षा से होता है। जो व्यक्ति जितना अधिक हिंसक होता है, उसकी इच्छाएं उतनी ही अधिक वीभत्स होती हैं।

मैं आपको काफी वक्त पहले की एक कहानी सुनाना चाहूंगा।

एक मुसाफिर था जिसे एक लंबा सफर तय करना था। इसलिए उसने अपने घोड़ा को रथ से बांधा और सुदूर स्थित मंजिल के लिए लंबे रास्ते के लिए निकल पड़ा, जहां उसे एक तय समय सीमा में पंहुच जाना था। रथ खींचने वाले घोड़ा को मैं ‘आवश्यकता’ कहना चाहूंगा, रथ को ‘लालसा’, एक पहिए को ‘सुख’ तथा दूसरे को ‘दुख’ नाम दूंगा। इस प्रकार मुसाफिर कभी दांई तो कभी बांईं ओर मुड़ते हुए अपनी मंजिल की तरफ बढ़ता रहा। रथ जितनी तेज रफ्तार से भागता था, ‘सुख’

तथा ‘दुख’ नामक पहिए भी उतनी ही तेजी के साथ घूमते जाते, क्योंकि दोनों ही पहिए एक ही अक्ष तथा लालसा के एक ही भागते रथ से जुड़े थे। चूंकि सफर बहुत ही लंबा था, हमारे मुसाफिर को ऊब महसूस होने लगी। फिर उसने अपने सफर को रोचक बनाने के लिए रथ को ढेर सारी खूबसूरत चीजों से सुसज्जित करने का फैसला किया, और इस काम को करता गया। लेकिन इच्छा रूपी रथ पर वह जितनी अधिक सज्जा का प्रयोग करता, ‘आवश्यकता’ नामक रथवाहक घोड़ा के लिए वह उतना ही भारी होता जाता। रेतीले रास्ते में ‘सुख’ तथा ‘दुख’ के दोनों पहिए प्राय: सतह में धंसने लगते। इस प्रकार एक दिन वह मुसाफिर बुरी तरह निराश हो गया क्योंकि रास्ता लंबा था तथा मंजिल अभी भी बहुत दूर थी। उसने उस रात अपनी समस्या पर विचार करने का फैसला किया, तथा ऐसा करते ही उसे अपने पुराने मित्र की इनकार की आवाज सुनाई दी। उसने इस प्रतीकात्मक संदेश के अर्थ को समझा तथा अगले दिन तड़के सुबह उसने रथ से सज्जा का समूचा बोझ उतारकर उसे हल्का बना दिया तथा अपने घोड़ा को रथ से बांध दुलकी चाल में मंजिल की ओर रवाना हो गया। जाहिर तौर पर, इस दौरान उसने काफी वक्त फिजूल में गंवा दिया था, जिसकी भरपाई अब संभव नहीं थी। रात आने पर वह पुन: विचार करने को हुआ तथा अपने उसी मित्र की एक नई सलाह के तौर पर उसे समझ में आया कि अब उसे पहले की तुलना में दोगुनी कठिनाई वाला लक्ष्य हासिल करना है, क्योंकि पहले उसने चूक कर दिया था। अगली सुबह उठते ही उसने झटपट ‘लालसा’ के अपने रथ का त्याग कर दिया। निश्चित तौर पर ऐसा करने से उसे ‘सुख’ रूपी पहिए से वंचित हो जाना पड़ा, लेकिन साथ ही साथ ‘दुख’ नामक पहिए से भी उसे मुक्ति मिल गई। वह ‘आवश्यकता’ नामक घोड़े के कूल्हे का सहारा लेकर उस पर सवार हो गया तथा हरे घास के मैदानों के ऊपर से चौकड़ी भरते हुए अपनी मंजिल तक पहुंच गया।

गौर करें कि लालसा किस प्रकार आपको अलग-थलग छोड़ देती है। लालसाएं विभिन्न प्रकार की होती हैं। कुछ लालसाएं भद्दे किस्म की होती हैं तथा अन्य उत्तम प्रकार की। लालसाओं को अधिक उत्तम किस्म का बनाने, उन पर विजय प्राप्त करने तथा उनका शुद्धिकरण करने के लिए आपको निश्चित रूप से ‘सुख’ वाले पहिए का त्याग करना पड़ेगा। लेकिन साथ में ‘दुख’ वाला पहिया भी दूर हो जाएगा। लालसाओं के चलते मनुष्य के भीतर उपजने वाली हिंसा केवल उसकी

चेतना में एक बीमारी की भांति ही कायम नहीं रहती बल्कि साथ ही दूसरे लोगों से संबद्ध क्रिया-कलापों में व्यस्त मनुष्यों की दुनिया तक में वह सक्रिय रहती है। आप यह न सोचें कि हिंसा की बात करते समय मैं अश्त्रों से की जाने वाली वैसी लड़ाइयों की बात कर रहा हूँ जिसमें कुछ लोग दूसरे लोगों को मारते-काटते हैं। वह हिंसा शारीरिक होती है। हिंसा का एक प्रकार आर्थिक हिंसा भी है: आर्थिक हिंसा के अंतर्गत आप दूसरों का शोषण करते हैं; आर्थिक हिंसा तब घटित होती है जब आप किसी को लूट रहे होते हैं; जब आप के बीच से भाईचारे की भावना का लोप हो जाता है, उल्टे आप अपने ही भाई का शिकार करने वाले आखेटक बन जाते हैं। हिंसा का एक अन्य प्रकार जातीय हिंसा है: क्या आपको लगता है कि अपने से इतर जाति (race) वाले व्यक्ति पर जुल्म ढाते हुए आप हिंसा नहीं कर रहे होते हैं, क्या आप यह मानते हैं कि अपने से इतर जाति का होने के कारण वैसों का अपमान करते हुए आप हिंसा नहीं कर रहे होते हैं?

एक अन्य प्रकार की हिंसा धार्मिक हिंसा होती है: क्या आप यह मानते हैं कि हमें कोई काम देते वक्त अथवा आपके अपने धर्म का अनुयायी नहीं होने के कारण किसी लिए अपना दरवाजा बंद कर लेते हुए अथवा उसे भगा देते हुए आप हिंसा नहीं कर रहे होते हैं? क्या आपको लगता है कि अपमान के माध्यम से आपके सिद्धांतों से सहमत न होने वाले व्यक्ति का घेराव करने लगना; उसका उसके परिवार के बीच, उसके अपने लोगों के बीच सिर्फ इसलिए घेराव कर लेना कि वह आपके धर्म की मान्यताओं से सहमत नहीं है, हिंसा नहीं है? अन्य प्रकार की हिंसाएं भी होती हैं जो संकुचित विचारों वाली नैतिकता द्वारा आरोपित की जाती हैं। आप दूसरों के ऊपर अपने जीवन के तरीके थोपना चा हते हैं, आप चाहते हैं कि वे आप ही की वृत्ति अपना लें... लेकिन आपको किसने बता दिया है कि आप अनुसरण किए जाने लायक कोई आदर्श हैं? आप से किसने कह दिया कि चूंकि आप अपनी तरह के जीवन में खुश और मगन हैं, इसलिए आप उसे दूसरों पर भी थोप सकते हैं? ऐसा कहां लिखा है और वह शख्स कौन है जिसने कहा है कि इसे किसी पर थोपा जाना चाहिए? अन्य प्रकार की हिंसाएं की हिंसाएं भी होती हैं। अपने भीतर की, दूसरों के भीतर की तथा अपने आस-पास बिखरी दुनिया की समूची हिंसा का अंत सिर्फ आप कर सकते हैं, अपने आंतरिक विश्वास तथा आंतरिक विचारों के माध्यम से। हिंसा से निबटने के लिए कोई चोर दरवाजा नहीं होता।

दुनिया भयंकर विस्फोट की कगार पर खड़ी है और हिंसा का अंत करने का कोई और तरीका नहीं है। इसके लिए किसी चोर दरवाजे की तलाश करना बेमानी है। हिंसा के ऐसे उन्माद का समाधान करने वाली राजनीति भी कहीं नज़र नहीं आती। हिंसा से निबटने के समर्पण के लिहाज से पूरी दुनिया ही दलों तथा आंदोलनों से खाली हो गई है। समूची दुनिया में हिंसा का कोई छद्म समाधान संभव नहीं है। लोग मुझसे कहते हैं कि विभिन्न भूगोल में रहने वाले युवा हिंसा तथा आंतरिक कष्टों से निपटने के लिए ऐसे तरीके खोज रहे हैं। समाधान के तौर पर किसी दवा की तलाश करिए। हिंसा से निबटने के लिए चोर दरवाजों की तलाश करने से काम नहीं चलने वाला।

मेरे भाई, इन सामान्य सी अनिवार्यताओं को पूरा करो। इन पत्थरों, इस बर्फ और हम पर करम बरसाने वाली इस धूप जैसी सामान्य अनिवार्यताएं। अपने भीतर शांति को धारण करो तथा दूसरों तक उसका संचार करो। मेरे भाई: उस कथा में मनुष्य होना कष्टों के रूप में दिखाई देता है, कष्ट के उस रूप पर गौर करो। लेकिन साथ ही यह भी याद रखो कि आगे बढ़ना भी जरूरी है, तथा हंसते रहना और प्रेम करना सीखना भी जरूरी है।

मेरे भाई, मैं तुम्हारी उम्मीद की यह गठरी भेज रहा हूँ, जिसमें उम्मीद है खुशी की, जिसमें उम्मीद है प्रेम की ताकि तुम्हारा दिल बड़ा हो सके और तुम्हारी आत्मा का उत्थान हो सके। ताकि तुम कहीं अपने शरीर के उत्थान को भी न भूल जाओ।

नोट:

1. अर्जेंटीना की सैन्य तानाशाही द्वारा नगरों में किसी भी प्रकार की सामूहिक गतिविधि पर बंदिश लगा दी गई थी। अत: चिली तथा अर्जेंटीना के सीमावर्ती इलाके 'पुंता दे बाकास' नामक निर्जन स्थान का चुनाव किया गया। तड़के सुबह से प्रशासन ने वहां तक जाने वाले रास्तों की नाकेबंदी शुरू कर दी। मशीन गनों, सेना के वाहनों तथा हथियारों से लैस जवानों के झुंड के झुंड दिखाई देने लगे। आगे बढ़ सकने के लिए व्यक्तिगत विवरण तथा दस्तावेज प्रस्तुत करना जरूरी था, जिसके चलते अंतर्राष्ट्रीय प्रेस को कुछ दिक्कते पेश आने लगीं। बर्फ से ढंके पहाड़ों के मनोरम दृश्य घिरी जगह पर

करीब दो सौ लोगों के जन-समूह के बीच सिलो अपना भाषण शुरू कर दिए। दिन ठंडा था लेकिन धूप थी। रात के करीब 12 बजे तक सभा संपन्न हो चुकी थी।

2. यह जनता के बीच आने का सिलो का पहला वाकया है। इसे मोटे तौर पर काव्यात्मक शिल्प में व्याख्यायित करें तो कहना होगा कि जीवन के लिए सबसे जरूरी ज्ञान (सच्च विवेक) पुस्तकों के ज्ञान, ब्रह्मांड के नियम आदि से इतर, व्यक्तिगत अनुभूति का निजी मामला होता है। जीवन के लिए सबसे अहम ज्ञान ज्ञान वह है जो कष्ट तथा वैयक्तिक उन्नयन की सम्यक समझ दे सके।

आगे, विभिन्न खंडो में विभक्त, एक बेहद सरल सा प्रसंग प्रस्तुत है: 1. इसका विस्तार इस बात को समझते हुए कि विज्ञान तथा न्यायव्यवस्था की बदौलत उनके प्रभाव को कम किया जा सकता है, शारीरिक तकलीफों तथा उनसे उत्पन्न होने वाले कष्टों के बीच भेद से लेकर उन मानसिक पीड़ाओं को समझने तक होगा जिनका प्रभाव इन साधनों के जरिए कम नहीं किया जा सकता; 2. ऐसी पीड़ा के तीन कारण होते हैं: पहला कारण धारणा, दूसरा स्मृति तथा तीसरा कल्पना है; 3. पीड़ा हिंसा की अवस्था को उजागर करती है; 4. हिंसा का वृक्ष लालसा के मूल से उपजता है; 5. लालसाओं की विविध कोटियां और रूप होते हैं। इससे (‘‘अभ्यंतर के ध्यान के जरिए’’) गुजरते हुए आप जीवन में आगे बढ़ते रह सकते हैं।

इस प्रकार: 6. लालसा (‘‘लालसाएं कितनी तो बुरी होती हैं’’) हिंसा के लिए उकसाती है जो आपके भीतर तक में सिमट जाने वाली चीज न होकर संबंधों के जरिए बाह्य जगत को भी दूषित करती है; 7. जैसा कि आप जानते हैं कि हिंसा के विभिन्न रूप हैं जो केवल शारीरिक हिंसा रूपी पहले प्रकार तक ही सीमित नहीं हैं; 8. यह आवश्यक है कि जीवन का नियमन करने वाले (‘‘सामान्य शर्तों को पूरा करने वाले’’) सरल आचरण को अपनाया जाय: शांति, खुशी तथा इन सबसे अधिक उम्मीद को धारण करने की सीख ली जाय।

निष्कर्ष: मानव मात्र के कष्टों के निराकरण के लिए विज्ञान तथा न्याय अत्यंत आवश्यक हैं। मानसिक पीड़ाओं पर विजय पाने के लिए आदिम लालसाओं को जीतना आवश्यक है।

आंतरिक दृष्टि

I. चिंतन

1. इससे यह पता चलता है कि किस प्रकार जीवन की अर्थहीनता अर्थ तथा पूर्णता का रूप ले लेती है।
2. इससे शरीर, स्वभाव, मानवता तथा आत्मा में खुशी तथा प्रेम का संचार होता है।
3. इसके जरिए आप दान, अपराध-बोध, तथा जीवन के बाद के भय आदि को नकार देते हैं।
4. इसमें ऐहिक तथा शाश्वत परस्पर विरोधी चीजें नहीं होती हैं।
5. यहां उस अंतर्जगत के उद्घाटन की बात होती है जहां तक विनम्र भाव से सत्य की तलाश हेतु चिंतन करने वाला प्रत्येक मनुष्य पहुंच सकता है।

II. समझने की ओर रुझान

1. चूंकि मैं खुद को आपकी जगह रखकर उसका अनुभव कर सकता हूँ इसलिए मुझे पता है कि आप कैसा महसूस करते होंगे, लेकिन आप मेरी कही बात को वैसी तत्परता के साथ नहीं महसूस कर सकेंगे। अत: यदि मैं अरुचिपूर्ण तरीके से ही सही, उस चीज के बारे में बताऊं जिससे मानव मात्र को खुशी तथा स्वतंत्रता मिल सके, तो मुझे लगता है कि उसे समझने का प्रयास करना एक सार्थक चीज होगी।
2. आप ऐसा न सोचें कि मेरे साथ तर्क करके आप इसे समझ सकेंगे। यदि आप यह मानते हैं कि खंडन करते हुए आप बेहतर समझ विकसित कर सकेंगे, तो आप ऐसा कर सकते हैं, लेकिन फिलहाल इस विषय में यह सही तरीका नहीं होगा।
3. यदि आप मुझसे यह पूछना चाहते हैं कि कौन सा आचरण सबसे उपयुक्त है, तो मैं आपको मेरे बताए हुए के अनुसार बिना किसी कठिनाई के सघन चिंतन (Meditation) करने की सलाह दूंगा।
4. यदि आप जवाब में मुझसे यह कहते हैं कि आपके पास करने को इससे कहीं अधिक जरूरी काम हैं, तो मैं जवाब में आपसे कोई उल्टी बात कहने की बजाय इसे आप द्वारा अपनी इच्छानुसार शयन तथा मृत्यु में से किसी एक का चयन करने जैसा कहूंगा।
5. मुझसे इस बात की भी शिकायत मत करिएगा कि मेरा बात रखने का तरीका आपको नहीं पसंद आता क्योंकि फल के स्वादिष्ट होने पर छिलके से आप ऐसी शिकायत कभी नहीं करते।
6. मैं चीजों की व्याख्या उस तरीके से करता हूँ जो मुझे सुगम लगे बजाय वैसे तरीके के जो आंतरिक सच से दूर की चीजों से लगाव रखने वालों को पसंद आए।

III. अर्थहीनता

इस विरोधाभास तक पहुंचने में मुझे बहुत दिन लगे: जो लोग असफलता के एहसास को अपने हृदय में बचाकर रखे वे अंतिम विजय का दीप प्रज्ज्वलित करने में सफल रहे, जिन्होंने खुद को सफल देखा वे सड़कों पर बिखरी खराब सब्जियों की भांति परित्यक्त अवस्था को प्राप्त हुए। ज्ञान की बजाय चिंतन (तप) के जरिए सबसे गहरे अंधेरों से रौशनी तक भी मैं बहुत दिनों के बाद पहुंचा।

इस प्रकार उस पहले दिन मैंने कहा:

1. यदि मृत्यु के साथ हर चीज खत्म हो जाती है, तो जीवन का कोई अर्थ नहीं है।
2. क्रिया कलापों की प्रत्येक व्याख्या, चाहे वह उत्तम हों या अधम, एक नए स्वप्न की भांति है, जिसके आगे सिर्फ खालीपन है।
3. ईश्वर क्या है, यह अनिश्चित है।
4. विश्वास भी वि वेक तथा स्वप्न जैसी ही कोई अनिश्चित सी चीज है।
5. ''किसी को क्या करना चाहिए'' पर लंबी बहस हो सकती है, लेकिन इस क्रम में सामने आने वाली किसी भी व्याख्या का समर्थन करने वाली चीज अस्तित्व में ही नहीं होती।
6. किसी चीज का निर्वहन करने वाले के ''दायित्व'' निर्वहन न करने वाले के दायित्व से कतई श्रेयष्कर नहीं होते हैं।
7. मैं अपनी अभिरुचि के अनुसार ही कहीं आता-जाता हूँ, लेकिन इससे मुझे सर्प की संज्ञा नहीं दी जा सकती, न ही मुझे नायक कहा जा सकता है।
8. ''मेरी अभिरुचियां'' न तो किसी चीज को उचित ठहरा सकती हैं और न ही अनुचित।
9. ''मेरे तर्क'' दूसरों के तर्कों की तुलना में न तो बेहतर हैं न ही बदतर।

10. निर्दयता मुझे भयभीत करती है लेकिन इस कारण से अपने आप में यह अच्छाई की तुलना में न तो बेहतर और न ही बदतर चीज है।
11. मेरे अथवा किसी के द्वारा आज के दिन कही बात कल को अपना मूल्य खो चुकी होगी।
12. मृत्यु, जीवन अथवा जन्म की तुलना में श्रेयष्कर नहीं है लेकिन वह इनसे बदतर भी नहीं।
13. मैं ज्ञान से नहीं बल्कि अनुभव और चिंतन के माध्यम इस निष्कर्ष तक पहुंचा हूँ कि, जबकि, मृत्यु के साथ हर चीज का अंत तय है, अत: जीवन का कोई अर्थ नहीं।

IV. निर्भरता

दूसरे दिन:

1. मैं जो कुछ भी करता हूँ, महसूस करता हूँ तथा सोचता हूँ, वह मुझ पर निर्भर नहीं करता।
2. मैं परिवर्तनशील हूँ तथा मैं माध्यम के क्रिया-कलापों पर निर्भर हूँ। जब मेरी इच्छा माध्यम अथवा मेरे 'मैं' को बदलने की होती है, तो यह काम भी माध्यम ही करता है। इसलिए मैं उस शहर, कुदरत, सामाजिक उद्धार अथवा नए संघर्ष की तलाश में रहता हूँ जो मेरे अस्तित्व के औचित्य को स्थापित करे... उनमें से सभी स्थितियों में माध्यम ही मुझे यह तय करने के मुकाम तक पहुंचाता है कि कौन सा आचरण उपयुक्त है। इस तरह से मेरी अभिरुचियां तथा मेरा परिवेश यहां आकर मेरा साथ छोड़ देते हैं।
3. फिर मैं कहता हूँ कि इसका कोई महत्व नहीं कि निर्णय कौन लेता है। वैसी परिस्थितियों में मैं यह कहता हूँ कि चूंकि मैं जीने की स्थिति के बीच घिरा हूँ इसलिए मुझे जीना है। हालांकि यह सब कुछ कहते हुए मेरे पास ऐसी कोई चीज नहीं है जो इन बातों का औचित्य सिद्ध करे। मैं निर्णय ले सकता हूँ, हिचक सकता हूँ अथवा ठहर सकता हूँ। अस्थायी तौर पर कोई एक चीज दूसरी से बेहतर हो सकती है, लेकिन निश्चित तौर पर यही सत्य है कि 'बेहतर' और 'बदतर' जैसा कुछ भी नहीं होता।
4. यदि कोई मुझसे कहे कि खाना न खाने वाले की मृत्यु हो जाती है, तो मैं उससे कहूंगा कि उसकी बात असल में सही है और खाने वाला अपनी आवश्यकताओं के उकसावे में आकर ऐसा करता है लेकिन इससे मैं इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता कि खाने के लिए किए जाने वाले संघर्ष उसके अस्तित्व को उचित ठहराते हैं। न ही मैं इसे गलत कहूंगा। मैं ईमानदारी पूर्वक यह कहूंगा, कि यह वैयक्तिक अथवा सामूहिक अस्तित्व के लिए एक जरूरी बात है, लेकिन उस

आखिरी युद्ध में पराजय (मृत्यु) के साथ ही निरर्थक साबित हो जाती है।

5. मैं, साथ ही, यह भी कहूंगा कि गरीबों, शोषितों और पीड़ितों के संघर्षों के प्रति मैं सहानुभूति रखता हूँ। मैं कहूंगा कि मैं ऐसी पहचान से 'साधित' तो महसूस करता हूँ लेकिन मैं मानता हूँ कि इससे मैं कुछ साबित नहीं करता।

V. चेतना का संशय

तीसरे दिन:

1. कभी-कभी मैं उन घटनाओं से आगे निकल जाता रहा हूँ जो तब से बाद में घटित होने वाली हों।
2. कभी-कभी मैं बहुत दूर के विचारों में खो जाता रहा हूँ।
3. कभी-कभी मैंने उन जगहों के बारे में विवरण दे दिए हैं जहां मैं कभी नहीं गया।
4. कभी-कभी मैं हूबहू उन घटनाओं का बयान कर दिया हूँ जो मेरी अनुपस्थिति में घटित हुई थीं।
5. कभी-कभी मैंने खुद को बेशुमार आनंद में लिपटा पाया है।
6. कभी-कभी मुझ पर समझ की समग्रता ने हमले कर देती रही है।
7. कभी-कभी मुझ में परिपूर्ण समन्वय का वास हो जाता रहा है।
8. कभी-कभी मैं अपने सपनों को खुद से तोड़कर वास्तविकता को नए रूप में देखता रहा हूँ।
9. कभी-कभी मैंने अपने द्वारा पहली बार देखी जा रही चीजों को ऐसा देखा है जैसे मैं उनसे पहले ही से वकिफ रहा हूँ।

...और इन सब से मैं सोचने को विवश हुआ। लेकिन इसका फायदा यह हुआ कि इन अनुभवों के चलते ही मैं अर्थहीनता की स्थिति से बाहर आ सका।

VI. स्वप्न और जागरण

चौथे दिन:

1. मैं सपने में देखी चीजों को वास्तविक नहीं मान सकता, न ही अधनींद में देखी चीजों को, और न ही जागरण की अवस्था में देखी चीजों को, मैं वास्तविक उसे मानता हूँ जो मैं स्वप्न देखते समय देख रहा होता हूँ।
2. बिना किसी दिवास्वप्न के, जागरण, के दौरान देखी चीजों को मैं वास्तविक मान सकता हूँ। यह बात मेरी चेतना में दर्ज होने वाले सच की नहीं है बल्कि मेरे मष्तिष्क के उन क्रिया-कलापों ही है जो उसके द्वारा सोचे गए 'विवरणों' के संदर्भ वाले हैं। क्योंकि बाहरी चेतना, आंतरिक चेतना या फिर स्मृतियां सरल तथा संदेहपूर्ण आंकड़ों का ही समावेश करती रहती हैं। यहां वैध तथ्य यह है कि मेरा मष्तिष्क जाग्रत अवस्था में इसे जानता है तथा शयन की अवस्था में इस पर यकीन करता है। ऐसा शायद ही कभी होता है कि मैं वास्तविकता को किसी नई चीज के तौर पर देख पाऊं और इसीलिए मैं यही समझता हूँ कि आम तौर पर मुझे जो कुछ भी दिखता है वह या तो स्वप्न अथवा किसी अर्धस्वप्न में देखे हुए की ही तरह का होता है।

जगे होने का एक वास्तविक स्वरूप वह है: जो यहां अब तक के कहे सब कुछ के बाद मुझे गहन चिंतन में प्रवृत्त करता है और जो मेरे लिए अस्तित्व में होने वाली प्रत्येक चीज तक पहुंचने की चेतना का द्वार खोलता है।

VII. ऊर्जा की उपस्थिति

पांचवे दिन

1. जब मैं वास्तव में जाग्रत अवस्था में था, तब मैं एक तरह की समझ से दूसरे तरह की समझ तक उछलता रहता था।

2. जब मैं वास्तव में जाग्रत अवस्था में था तथा अपने भीतर से और अधिक आगे बढ़ सकने के सामर्थ्य को चुकता हुआ देखता था, तो मैं अपने भीतर से ही ऊर्जा प्राप्त कर लेने में सक्षम होता था। वह उर्जा पूरी की पूरी मेरे शरीर में ही उपस्थित रहती थी। वह समूची ऊर्जा मेरे शरीर की सबसे छोटी कोशिकाओं तक में संचित होती थी। वह ऊर्जा मुझमें दौड़ती रहती थी और उसका वेग मुझमें रक्त के वेग से भी अधिक तीव्र हुआ करता था।
3. मैंने पाया कि जब उस ऊर्जा के सक्रिय होने की जरूरत होती थी, तब वह मेरे शरीर में विभिन्न बिंदुओं पर उपस्थित रहती थी लेकिन जब उसे सक्रिय नहीं होता तब वह अनुपस्थित हो जाती थी।
4. बीमार होने की अवस्था में या तो उस ऊर्जा की कमी हो जाती थी या फिर वह ठीक शरीर के प्रभावित बिंदुओं पर आकर सिमट जाती थी। लेकिन यदि मैं उस ऊर्जा के संचार को पूर्ववत बहाल कर लेने में सफल हो जाता, अनेक रोग खुद ब खुद मुझसे दूर भाग जाते थे।

कुछ ग्रामीणों को इस बात का ज्ञान था तथा वे उन विभिन्न विभिन्न तरीकों से खुद में उस ऊर्जा का पुनर्संचार कर लेते थे जिनसे हम अनभिज्ञ हैं।

कुछ ग्रामीणों को इस बात का ज्ञान था तथा वे उस ऊर्जा का दूसरों तक में संचार कर देते थे। फिर बोध के 'प्रकाश' से लेकर शारीरिक चमत्कार तक देखने में आने लगे।

VIII. ऊर्जा का नियंत्रण

छठे दिन:

1. शरीर के भीतर संचरित होने वाली ऊर्जा की गति को नियंत्रित करने तथा उसे केंद्रित करने का एक तरीका है।
2. शरीर के भीतर नियंत्रण के बिंदु या स्थल होते हैं। जो हमारी जानकारी वाली हरकतों, भावनाओं तथा विचारों पर निर्भर करते

हैं। ऊर्जा जब उन बिंदुओं पर कार्यरत होती है तब भावनात्मक तथा विचारों से जुड़े पहलुओं का उजागर होना शुरू होता है।

3. यह ऊर्जा जैसे-जैसे शरीर के भीतर और बाहर काम करती जाती है, गहरे स्वप्न, अर्धस्वप्न तथा जागरण की अवस्थाएं वैसे ही विकसित होती हैं। निश्चित तौर पर धार्मिक चित्रों में संतों (अथवा महान जागरूक लोगों) के शरीर अथवा मष्तक में घूमते दिखाई देने वाले चेतना के प्रकाश पुंज, उसी ऊर्जा की ओर इशारा कर रहे होते हैं जो समय-समय और अधिक स्पष्ट तरीके से दिखाई देते हैं।
4. वास्तव में जाग रहे होने का एक नियंत्रण बिंदु होता है तथा ऊर्जा को वहां तक लाने का तरीका भी।
5. जब हम ऊर्जा को उस बिंदु तक ले जाते हैं तब अन्य सभी नियंत्रण बिंदुओं में हलचल होने लगती है और वे फड़कने लगती हैं।

इसे समझने तथा ऊर्जा को उस उच्च बिंदु तक पहुंचाने के बाद मुझे शरीर के भीतर शक्ति के एक भंडार का अनुभव किया जिसने मेरी चेतना पर तीव्र प्रहार किया और मुझे एक बाद एक कर अनेक प्रकार के ज्ञान के बोध होने लगे। लेकिन मैंने इस बात पर भी गौर किया कि उस ऊर्जा पर नियंत्रण मेरा नियंत्रण खत्म होते ही मैं अपने मष्तिष्क की गहराइयों में जा गिरने वाला था। फिर मुझे स्वर्ग और नर्क की कथाओं की याद आई तथा मैं उन दोनों ही मन:स्थितियों के बीच फर्क करने वाली बारीक रेखा को देख सका।

IX. ऊर्जा की अभिव्यक्ति

सातवें दिन:

1. अपनी गति की अवस्था में वह ऊर्जा अपने एकीकरण को बरकरार रखते हुए शरीर से ''मुक्त'' भी कर सकती थी।
2. वह एकीकृत ऊर्जा एक प्रकार के 'दोहरे शरीर' जैसी थी जो निरूपण के आकाश में उसी शरीर के गतिसंवेदी निरूपण के समान है। शरीर के आंतरिक संवेदनों के रूप में निरूपित होने वाले उस आकाश पर मानसिक हरकतों पर गौर करने वाले विज्ञान ने भी पर्याप्त ध्यान नहीं दिया।
3. संचरित होने वाली ऊर्जा (जिसकी कल्पना शरीर से बाहर अथवा अपने मूल से अलग किसी वायवीय चीज के रूप में होती रही), चित्र की ही भांति लुप्त हो गई या फिर उसका प्रदर्शन बिलकुल ठीक प्रकार से हुआ, यह उसका नियमन करने वाले की आंतरिक संरचना पर निर्भर करता है।
4. यह परखा जा सकता है कि उस ऊर्जा का ''बाह्यीकरण'', जिसके चलते वही शरीर, शरीर से पृथक की कोई चीज प्रतीत होती है, मष्तिष्क के निचले हिस्से से उत्पन्न होती दिखाई देती है। वैसी स्थिति में यह होता कि जीवन की सबसे प्राथमिक ईकाई के विरुद्ध निशाने पर रहने वाले हिस्से ने अपने भीतर से समस्त खतरों से बचाव का सुरक्षाकवच उत्पन्न किया। इसलिए किन्हीं माध्यमों की अवचेतस अवस्था जिसकी चेतना बहुत ही कम स्तर पर सक्रिय रही हो तथा जिसकी बाह्य ईकाई जोखिम में हो, ऐसी प्रतिक्रिया स्वत:प्रेरित होती है तथा उसकी पहचान उस इकाई से उत्पन्न प्रभाव के चलते न होकर किसी अन्य चीज से पैदा चीज के रूप में होती है।

किसी गांव के ''भूत'' या किसी भविष्यवक्ता की बताई ''आत्माएं'' उनका सामना करने वाले व्यक्ति का ही 'दुहराव' (वास्तविक रूप का

दर्शन) रहे। चूंकि उनकी मानसिक अवस्था सुसुप्त (अवचेतस) हो गई और वे उस ऊर्जा पर से अपना नियंत्रण खो दिए, इसलिए वे विचित्र चीजों के प्रभाव में आते महसूस किए, जिसमें प्राय: उल्लेखनीय चीजें घटित होती दिखती हैं। निश्चित तौर पर 'प्रेतबाधा से ग्रस्त' अनेक लोग ऐसे ही प्रभावों के असर में रहे हैं। इस प्रकार, निर्णायक चीज उस ऊर्जा पर नियंत्रण है।

इससे वर्तमान जीवन से लेकर मृत्यु के बाद के जीवन तक को लेकर मेरी धारणा पूरी तरह से बदल गई। इन विचारों तथा अनुभवों के बीच खोए रहते हुए मृत्यु पर से मेरा विश्वास उठता गया तथा तभी से मैं उसमें यकीन नहीं करता, जैसे कि मैं जीवन की अर्थहीनता में विश्वास नहीं करता।

X. अर्थ(आशय) का प्रमाण

आठवें दिन:

1. जाग्रत अवस्था के जीवन का वास्तविक महत्व मेरी नजर में स्पष्ट हो गया।
2. आंतरिक अंतर्विरोधों को खत्म करने का वास्तविक महत्व मुझे समझ में आ गया।
3. एकीकरण तथा सततता के स्तर तक पहुंचकर ऊर्जा का नियमन करने के वास्तविक महत्व ने मुझे आनंदानुभूति से भर दिया।

XI. प्रकाशित अंतस्

नवें दिन:

1. उस ऊर्जा के अंदर एक ‘‘प्रकाश’’ निहित था, जो एक केंद्र से प्रसारित होता था।
2. उस ऊर्जा के वलय में केंद्र से दूर जाने का क्रम स्पष्ट था तथा उसकी उसके एकीकरण एवं विस्तार के बीच उसका केंद्र प्रकाशमान था।

मुझे प्राचीन ग्राम्य जीवन में सूर्य-देव की उपासना का तथ्य जानकर कतई हैरानी नहीं हुई तथा मैंने देखा कि कुछ लोग सूर्य की उपसना इसलिए करते हैं कि वह इस पृथ्वी तथा इस प्रकृति को जीवन देता है, दूसरों को उस विशालकाय पिंड में वृहत्तर यथार्थ के प्रतीक दिखाई दिए।

ऐसे लोग भी हुए जो इससे आगे बढ़ते हुए उस केंद्र से असंख्य उपहार भी उगाहे जो कभी ऊर्जित व्यक्ति की अगनि सरीखी जिह्वा, कभी प्रकाशमान तलवार तो कभी सहमे हुए आस्तिक के समक्ष जलती हुई झाड़ी के रूप में सामने आ जाते थे।

XII. अन्वेषण

दसवें दिन:

हालांकि उनकी संख्या कम थी, लेकिन मेरे अन्वेषण अहम रहे, जिन्हें मैं संक्षेप में बताता हूँ:

1. वह ऊर्जा शरीर के भीतर स्वत:स्फूर्त तरीके से संचरित होती रहती है, लेकिन एक चेतस् प्रयास की मदद से अभिविन्यस्त हो सकती है। चेतना के स्तर पर ऐसे निदेशित परिवर्तन की उपलब्धि मनुष्य के द्वारा ''स्वाभाविक'' परिस्थितियों से मुक्त होकर एक आभा को प्राप्त कर लेना है जो कि चेतना से आरोपित होता हो।
2. शरीर के अंदर उसकी विभिन्न गतिविधियों को नियंत्रित करने वाले बिंदु मौजूद होते हैं।
3. वास्तविक जाग्रत अवस्था तथा अवचेतन के विभिन्न स्तरों के बीच दूसरे अंतर भी होते हैं।
4. ऊर्जा को वास्तविक जाग्रत अवस्था के बिंदु तक ले जाया जा सकता है (''ऊर्जा'' का आशय उस मानसिक ऊर्जा से है जिसके साथ निश्चित चित्र जुड़े होते हैं तथा ''बिंदु'' का आशय उस चित्र के निरूपण के एक खास स्थल से है)।

इस निष्कर्ष के चलते मैं प्राचीन काल के मनुष्य की उपासना पद्धति में छुपे महान सत्य के उस बीज को पहचान सका जो बाहरी व्यवहारों तथा आडंबरों के अंधकार के प्रभाव में उस आंतरिक क्रिया तक हमें नहीं पहुंचने देता था जिसे सधे तरीके से करने पर मनुष्य का उस प्रकाश स्रोत से साक्षात्कार हो जाता है। अंत में मुझे यह एहसास हुआ कि मेरे ''अन्वेषण'' असल में उस रूप वाले थे जो अंतस् के उस उद्गार से प्रेरित थे किसी अपेक्षी मनुष्य को बिना किसी अंतर्विरोध के उसके हृदय के प्रकाश तक पहुंचा देता है।

XIII. आरंभ

बिजली की भांति होने वाले आंतरिक सत्य के उद्घाटन के बाद जीवन तथा अन्य चीजों के प्रति नज़रिया बदल जाता है।

चरणबद्ध तरीके से अनुसरण करते हुए, अब तक बताए हुए पर चिंतन करते हुए, यकीनन, आप अर्थहीनता को अर्थ में परिवर्तित कर सकते हैं। आप अपने जीवन के साथ कैसा बर्ताव करते हैं, यह कोई अलग सी चीज नहीं है। कानून से नियंत्रित आपका जीवन चयन की जाने वाली संभावनाओं का जीवन होता है। मैं आपसे आजादी की बात नहीं करता। मैं आपसे ''मुक्ति'' की बात कर रहा हूँ, हरकतों और प्रक्रियाओं से मुक्ति की बात। मैं किसी 'गतिहीन' मुक्ति की बात भी नहीं कर रहा, बल्कि मैं एक के बाद एक कदम बढ़ाते हुए मुक्ति की ओर अग्रसर होने की बात कर रहा हूँ, जैसे कोई यात्री अपने शहर के करीब पहुंचकर वहां तक पहुंचाने वाली मुख्य सड़क से को पीछे छोड़ देता है। इसलिए ''क्या करना सही है'', यह किसी हवाई, समझ से परे तथा परंपरागत नैतिकता के आधार पर तय नहीं होता बल्कि नियम के आधार पर निर्धारित होता है: जीवन के नियम, प्रकाश के और विस्तार के नियम पर।

आंतरिक एकीकरण की तलाश में सहायक हो सकने वाले वे तथाकथित ''सिद्धांत'' इस प्रकार हैं:

1. चीजों के विस्तार के विरुद्ध जाना खुद के विरुद्ध जाने जैसा है।
2. जब आप किसी चीज पर एक छोर से दबाव डालते हैं तो उससे दूसरा छोर तैयार हो जाता है।
3. किसी सशक्त बल का सीधा विरोध न करें। उसके कमजोर पड़ने तक प्रतीक्षा करें, फिर दृढ़ निश्चय के साथा आगे बढ़ें।
4. चीजें साथ-साथ चलते हुए ही ठीक रहती हैं बजाय अलग-अलग चलने के।
5. यदि आपके लिए दिन और रात, ग्रीष्म और शिशिर सारे अच्छे हैं, तो आपने अंतर्विरोधों पर विजय प्राप्त कर लिया है। यदि आप सुख की तलाश कर रहे हैं, तो आप द्वारा दुख का भागी

होना निश्चित है। लेकिन, जब तक कि आप अपने स्वास्थ्य को क्षति नहीं पहुंचाते, अवसर आने पर आप अबाध रूप से सुख का भोग कर सकते हैं।

6. यदि आप किसी एक छोर की तलाश में हैं, तो आप बंधन में हैं। यदि अपने द्वारा की जाने वाली प्रत्येक चीज को आप एक लक्ष्य के रूप में देखें, तो आप खुद को मुक्त कर सकेंगे।
7. आपकी उलझनों का समान आप द्वारा उनके समाधान की इच्छा करने से नहीं होता, बल्कि जब आप उनके मूल कारण को समझ लेते हैं तो खुद ही लुप्त हो जाती हैं।
8. जब तक आप दूसरों को क्षति पहुंचाते हैं, आप बंधन में होते हैं। लेकिन जैसे ही आप दूसरो के नुकसान की भावना को दूर करते हैं, आप कुछ भी करने के लिए स्वतंत्र हो जाते हैं।
9. जब आप दूसरों के प्रति वैसा ही व्यवहार करते हैं जैसा आप खुद के साथ किया जाना पसंद करें, तभी से आप मुक्त हो जाते हैं।
10. इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप किस तरफ हैं, फर्क इससे पड़ता है कि आप समझें कि आप असल में किसी भी तरफ नहीं हैं।
11. इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप किस तरफ हैं, फर्क इससे पड़ता है कि आप समझें कि आप असल में किसी भी तरफ नहीं हैं।
12. गतिविधियां चाहे परस्पर विरोधी हों अथवा एक जैसी हों, वे आप ही के अंतस् में संचित होती रहती हैं। यदि आप अपने आंतरिक एकीकरण की क्रिया को दुहराते रहें तो कोई भी आपको रोक नहीं सकेगा।

जब आप अपने आस-पास किसी भी तरह का गतिरोध नहीं पाएंगे, आप स्वत: एक प्रकृति की शक्ति के पर्याय बन जाएंगे। कठिनाई, समस्या, असुविधा आदि में अंतर्विरोधों की पहचान करना सीखें। यदि आप इनसे प्रभावित और उत्तेजित होते हैं, तो आप एक बंद दायरे में पड़े हुए हैं।

जब आपको अपने हृदय में बड़ी ऊर्जा, खुशी तथा अच्छाई का समावेश होता दिखे अथवा जब आप स्वतंत्र तथा अंतर्विरोधों से मुक्त महसूस करें, तुरंत अपने अंतस् को धन्यवाद कहें। वहीं यदि इसके उलट महसूस करें, तब अपने विश्वास से मांग करें और आप पाएंगे कि पहले के जो 'धन्यवाद' आपने संचित किए हैं वे वृहत्तर रूप लेकर आपके भले के लिए उपस्थित हो जाएंगे।

XIV. अंतस् के पथ का प्रदर्शक

यदि आपने अब तक बताई चीजों को समझ लिया है, तो आप उस ऊर्जा की अभिव्यक्ति के सरल कार्य के जरिए इनके प्रयोग कर सकते हैं। एक सुर अपना लेना तथा किसी कविता से प्रेरित एक भावबोध धारण कर लेना, अब, मोटे तौर पर सही मा नसिक स्थिति की पहचान (मानो तकनीकी रूप से) करने जैसी चीज नहीं रह जाती। इसीलिए इस सत्य को अभिव्यक्त करने की भाषा उस भंगिमा को संभव करने का प्रयास करती है जिसमें ''आंतरिक धारणा'' के विचार मात्र की बजाय आंतरिक धारणा की उपस्थिति कहीं आसानी से संभव हो सके।

अब मैं जो बताने जा रहा हूँ उसका ध्यानपूर्वक अनुसरण करें क्योंकि यह आपके भीतर के संसार के बारे में है जिससे आप ऊर्जा से साक्षात्कार के प्रयास में दो-चार हो सकेंगे तथा अपने मानस पटल पर वहां तक पहुंचने के मार्ग का अंकन कर सकेंगे। अंदर के मार्ग पर आप अंधेरे और रौशनी दोनों में चल सकेंगे। आपने सम्मुख आने वाले दो मार्गों का अनुसरण करें।

यदि आप खुद को अंधेरे मार्ग की ओर चले जाने देते हैं, तो संघर्ष में आपके शरीर की जीत होगी और शरीर हावी रहेगी। आगे वहां आत्माओं, ऊर्जाओं तथा स्मृतियों की अनुभूतियां और झलक देखने को मिलेंगे। वहां से भीतर, और अधिक भीतर जाएं। वहां आपकी मुलाकात घृणा, प्रतिशोध, अजनबीपन, अधिकार, ईर्ष्या, स्थायित्व की लालसा आदि से होगी। यदि आप उससे भी आगे बढ़ते हैं, तो आपका सामना कुंठा, क्रोध तथा उन सभी दिवास्वप्नों और लालसाओं से होगा जिनकी वजह से मनुष्यता तबाही तथा मृत्यु की ओर अग्रसर होती है।

यदि आप खुद को प्रकाशमान रास्ते की ओर धकेलते हैं, तो आप को हर कदम पर गति रोध और थकान का सामना करना होगा। चढ़ाई की यह थकान दोषी होती है। आपका जीवन भारी होता है, आपकी

स्मृतियां भारी होती हैं, आपके पुराने कर्म चढ़ाई को दुरूह बनाते हैं। यह चढ़ाई आपके उस शरीर की गतिविधियों के चलते कठिन होती है जो आपको काबू में रखना चा हता है।
चढ़ाई के मार्ग में आपको चटक रंगों वाली अदेखी सी जगहें दिखाई देंगी तथा अनसुनी ध्वनियां सुनाई देंगी।
अपने शुद्धिकरण की प्रक्रिया से डर कर मैदान न छोड़ें, जो आग जैसी जलन देती है और जिसके भूत आपको डराते हैं।
झटकों तथा हताशाओं पर विजय प्राप्त करें।
नीचे की ओर जाने वाले अंधेरे रास्तों से पलायन की इच्छा को पीछे छोड़ बढ़ते रहें। स्मृतियों के प्रति आसक्तियों को भी जीतते जाएं।
अपने अंतस् की स्वतंत्रता के बीच मार्ग के स्वप्नदृश्यों के सहारे निष्पृह बने रहें, आगे बढ़ते जाने का इरादा मजबूत रखें।
ऊंचे पर्वत शिखर धवल प्रकाश में चमकते रहते हैं तथा हजारों वर्ण के जल अनसुनी सी धुनों के बीच पठारों तथा कांच से झलकते घास के मैदानों की तरफ बहते रहते हैं।
उस प्रकाश से बिलकुल भी भयभीत न हों जो हर बार आपको आपके केंद्र से बाहर की ओर धकेलने की कोशिश करेगा। उसे अपने भीतर इस प्रकार अवशोषित करने का प्रयास करें मानो वह कोई द्रव या हवा हो क्योंकि, असल में, वही जीवन है।
जब आपका सामना विशालकाय पर्वत श्रृंखला के बीच बसे शहर से हो, तो आपको उसमें प्रवेश का मार्ग पहचानना होगा। लेकिन इसे आप उस क्षण जान पाएंगे जिसमें आपका जीवन बदल चुका होगा।
उसकी विशालकाय दीवारें चित्रों, रंगों तथा अनुभूतियों से बनी हैं। इस शहर में की जा चुकी तथा की जाने वाली चीजें सुरक्षित होंगी... लेकिन आपके अंतर्चक्षुओं के लिए पारदर्शी भी अपारदर्शी की तरह का होगा। हां, वे दीवारें आपके लिए अभेद्य होंगी।
छुपे शहर की समूची ताकत को अपने साथ कीजिए। अपने प्रकाशमान चेहरे तथा भुजाओं को साथ लिए सघन जीवन की ओर वापस आइए।

XV. शांति का अनुभव तथा ऊर्जा का पथ

1. अपने शरीर को उसकी पूरी सहज अवस्था में छोड़ दें और दिमाग को शांत करें। फिर प्रकाशमान और पारदर्शी घेरे की कल्पना करें जो नीचे की ओर उतरते हुए आपके हृदय में आकर खत्म होता है। फिर आप पाएंगे कि वह घेरा एक चित्र की दिखाई न देकर अब आपके सीने में महसूस होने लगा है।
2. महसूस करें कि किस प्रकार उस घेरे की अनुभूति आपकी सांसों के दीर्घ और गहरे होते जाने के साथ आपके हृदय से निकलकर शरीर से बाहर की ओर तक विस्तृत होती जाती है। उस अनुभूति के शरीर के दायरे भर में फैल जाने की अवस्था के बाद आप हर प्रकार के क्रिया-कलाप को विराम देकर आंतरिक शांति को महसूस कर सकते हैं। यहां पहुंचकर आप अपनी इच्छानुसार चाहे जितने समय तक ठहर लें।

   फिर उस पहले वाले विस्तार को (हृदय तक की आरंभिक अवस्था में पहुंचने तक) समेटें ताकि आप उस घेरे अलग हो सकें और शरीर की सहज तथा मष्तिष्क की शांत अवस्था को पुन: प्राप्त कर सकें। इस अभ्यास को ''शांति की अनुभूति'' का नाम दिया जाता है।
3. किंतु इसकी जगह यदि आप ऊर्जा के संचरण पथ का अनुभव करना चाहते हैं, तो विस्तार से वापस लौटने की बजाय आपको अपनी भावनाओं तथा समूचे वजूद के साथ उसका अनुसरण करते हुए उसे और अधिक बढ़ने देना चाहिए। अपना ध्यान अपनी सांसों के बीच न भटकने दें। सांसों को उसकी रफ्तार पर छोड़कर आप अपने शरीर से बाहर के विस्तार का अनुसरण करें।
4. मैं दुहराता हूँ: उन क्षणों में आपको उस घेरे के विस्तार की अनुभूति के प्रति बहुत सावधान रहना होगा। यदि आप से नहीं हो पाए, तो इसे रोककर बाद में पुन: प्रयास करें। हालांकि इस

प्रक्रिया में आगे बढ़ने का मार्ग न ढूंढ पाने की अवस्था में भी आप एक रोचक शांति का अनुभव जरूर करेंगे।

5. इसके उलट यदि आप और अधिक आगे बढ़ते हैं, तो आप ऊर्जा के संचरण पथ की अनुभूति करना शुरू कर देते हैं। आपके हाथों तथा शरीर के अन्य हिस्सों से होते हुए आप तक सामान्य से अलग प्रकार की एक धुन की संवेदना आएगी। फिर आप निरंतर गुजरती तरंगों का अनुभव करेंगे जो कि जल्द ही प्रबल होकर दृश्यों और भावनाओं का रूप लेने लगेंगे। फिर आगे रास्ते को रूप लेने दें...
6. ऊर्जा की अनुभूति करने के बाद अपनी स्वाभाविकता के अनुसार अनोखे प्रकार के प्रकाश अथवा ध्वानि का अनुभव करेंगे। यहां चेतना के विस्तार के प्रयोग महत्वपूर्ण होंगे जिनमें सूचकों में से एक घटित हो रही चीजों के प्रति स्पष्टता तथा उन्हें समझने की तीव्र इच्छा होगा।
7. जब आपकी इच्छा हो, आप उस एकल अवस्था (यदि पहले उस अवस्था को हल्के में लेते हुए उससे गुजर जाना भर न हुआ हो) को उस घेरे के आप में सिमटते जाने तथा पहले बताए हुए के अनुसार पुन: आपके शरीर से बाहर तक बढ़ते जाने की कल्पना और अनुभव करते हुए प्राप्त कर सकते हैं।
8. यह समझना रोचक होगा कि चेतना की अनेक विकृत अवस्थाएं लगभग हर बार, पहले बताए हुए उपायों के जरिए, प्राप्त की जा सकती हैं अथवा उन तक पहुंचा जा सकता है। निश्चित तौर पर अजीबोगरीब संस्कारों में लिपटे तथा प्राय: ह्लासोन्मुख रीतियों, बहिर्गमन, पुनरावृत्ति तथा ऐसी भंगिमाओं आदि की तरफ पुन:प्रवृत्त होते हुए जो किसी भी स्थिति में श्वसन तथा अंत:शारीरिक संवेदनों को विकृत करते हैं। इस संदर्भ में आप सम्मोहन, जीवितों तथा आत्माओं के बीच संवाद करने वाले मध्यस्थों तथा दूसरे रूपों में कार्य करने वाली दवाओं के प्रभाव से उत्पन्न होने वाली ऐसी विकृतियों के बारे में जरूर जानते होंगे।

यूँ, निश्चित रूप से, इनमें से सभी मामलों में न तो किसी प्रकार के नियंत्रण के चिह्न दिखाई देते हैं न ही उन्हें पता होता है कि दरअसल हो क्या रहा है। ऐसे करतबों पर यकीन न करें तथा उन्हें सामान्य किस्म के ''अवचेतन'' मानें, प्रयोगधर्मी लोग और यहां तक कि कथाओं में आने वाले संत आदि तक भी जिनसे बिना किसी गंभीरता के गुजर जाते रहे हैं।

9. यदि आप यहां सुझाए हुए को ध्यान में रखते हुए इसे कार्यरूप देने के प्रयास किए हों, तो हो सकता है कि आप उस मार्ग तक पहुंच पाने में सफल न हुए हों। इसे चिंता का विषय न मानकर आंतरिक 'स्वतंत्रता' की कमी का सूचक भी माना जा सकता है जिसे तनाव के रूप में, उस दृश्य की क्रमिक गतिशीलता में समस्या के रूप में तथा संक्षेप में कहें तो भावनात्मक व्यवहार में अनियमितता के रूप में देखा जा सकता है... यानी वैसी चीजें जो आम तौर पर आपके दैनंदिन का हिस्सा होती हैं।

XVI. ऊर्जा का □□□□□□□ (फैलाव)

1. यदि आपने ऊर्जा के पथ को महसूस कर लिया हो तो आप समझ सकेंगे कि किस प्रकार विभिन्न जनों ने बिना किसी पुख्ता समझ के ऐसी ही प्रक्रियाओं पर आधारित अलग-अलग तरह के पंथ और अनुष्ठान शुरू कर दिए जो अबाध रूप से बढ़ते ही गए। बताई हुई पद्धति के ही अनुभव के जरिए ही अनेक लोगों ने अपने शरीर के 'विखंडित' होने को महसूस किया है। ऊर्जा की अनुभूति ने उन लोगों को इस बात का भान कराया कि वे इसे खुद से बाहर तक भी विस्तारित कर सकते हैं।
2. ऊर्जा दूसरों तक भी विस्तारित हुई लेकिन खास तौर पर उसे ग्रहण तथा संरक्षित कर सकने के लिहाज से ''उपयुक्त'' चीजों में। मुझे विश्वास है कि आपके लिए यह समझना मुश्किल नहीं होगा कि किस प्रकार कुछ संस्कारों के जरिए धर्मों की प्रासंगिकता, पवित्र स्थलों तथा उस ऊर्जा से ओत-प्रोत संतों के महत्व को बचाए रखने के कार्य संपादित होते रहे हैं। जब भी किसी मंदिर आदि में किसी चीज की

पूजा विश्वास के साथ होने लगी तथा वहां अनुष्ठान आदि की बारंबारता आरंभ हो गई, तो श्रद्धालुओं ने उसे प्रार्थनाओं की आवृत्ति के चलते ऊर्जा के संकेंद्रण का स्थल मान लिया। जबकि मूलभूत आंतरिक अनुभव इन चीजों को समझने का सबसे प्रमुख स्रोत होते हैं, यह मनुष्य के ज्ञान की सीमा है कि संस्कृति, स्थान, कथाओं तथा परंपराओं आदि जैसी बाहरी चीजों के जरिए इन्हें देखता है।

3. इस ऊर्जा के ''विस्तार'', ''संधारण'' तथा ''वापसी'' पर आगे चलकर बात की जाएगी। लेकिन मैं बताना चाहूंगा कि धर्म के व्यवहार से अलग हुए समाजों में भी इसी प्रकार का चलन देखने को मिलता है जिनमें नेता तथा संभ्रांत लोग एक खास तरह के आभामंडल से सुसज्जित होते हैं जिनका दर्शन करने वाले उन्हें ''छू लेना'' तथा उनके वस्त्रों या बर्तनों की सुगंध को अपने पास कैद कर लेना चाहते हैं।

4. क्योंकि ''उन्नत'' (हाई) अवस्था का समूचा प्रदर्शन आंख से शुरू होकर दृष्टि की सामान्य सीध में ऊपर की ओर होता है। ''उन्नत'' वैसे व्यक्तित्व होते हैं जो दया, ज्ञान तथा उस ऊर्जा को ''धारण'' करते हैं। तथा ''उन्नत'' अवस्था में सोपान और ताकतें और ध्वज और अवस्थितियां मौजूद होती हैं। और हम आम नश्वर लोगों के लिए यह जरूरी होता है कि हम किसी भी कीमत पर सामाजिक संरचना के अंतर्गत विभिन्न स्तरों को पार करते हुए ताकत हासिल करें। अभी भी अपनी आंतरिक संरचना से जुड़े उन्हीं प्रक्रियाओं द्वारा संचालित, हम सब कितनी बुरी स्थिति में हैं, जहां हमारा सिर उस ''उन्नत'' अवस्था से तथा हमारे पैर धरती से बंधे हुए हैं। उन चीजों में यकीन करते हुए (तथा यह विश्वास इसलिए, कि हमारी ''वास्तविकता'' असल में अंतस् के दर्शन में ही निहित है) भी, हम कितनी बुरी स्थिति में हैं। हम कितनी बुरे हैं कि हमारी बाहरी दृष्टि अंतस् की दृष्टि के विस्तार की उपेक्षा भर है।

XVII. ऊर्जा का लुप्त होना तथा उस पर नियंत्रण

1. ऊर्जा के अधिक मात्रा में स्राव का कारण अनियंत्रित गतिविधियां होती हैं। ऐसी गतिविधियां इस प्रकार हैं: स्वच्छंद कल्पनाएं, अनियंत्रित चेष्टाएं, अत्यधिक कामुकता तथा अतिरंजित धारणाएं (असीमित तथा निरुद्देश्य तरीके से देखना, सुनना, पसंद करना आदि)। लेकिन आपको यह भी पता होना चाहिए कि अनेक लोग इस पथ पर इसलिए भी अग्रसर हो जाते हैं कि वे इस बहाने से दूसरे रूपों में कष्टकर होने वाले अपने तनावों से मुक्त होना चाहते हैं। इसे ध्यान में रखते हुए लोगों को उस प्रकार के तनावों से मुक्त होने के प्रयास करते देखने पर आप मेरी बात से सहमत होंगे कि उन्हें ऐसा करने से मना करना अनुचित होगा, बल्कि ऐसे में उन्हें पुनर्व्यवस्थित किया जा सकता है।
2. जहां तक कामुकता के प्रसंग की बात है, इसे ठीक प्रकार से इस तरह समझा जा सकता है: ऐसी चीजों को दबाया नहीं जाना चाहिए क्योंकि दबाए जाने पर वे अपमानजनक परिस्थितियां तथा आं तरिक विरोधाभास उत्पन्न करती हैं। कामुकता विमुख करती है तथा अपनी दिशा में मुकाम तक पहुंचती है, लेकिन ऐसा जरूरी नहीं है कि उसके कारण कल्पनाशीलता प्रभावित हो तथा वह अपने नए ठिकानों की तलाश में अतिशय आसक्त कर दे।
3. किसी निश्चित सामाजिक अथवा धार्मिक नैतिकता के तहत सेक्स पर नियंत्रण के चलन का कोई भी संबंध विकास ने नहीं रहा, वरन उसके विपरीत जरूर रहा।
4. उन दमित समाजों में (अंत:शारीरिक अनुभूति का प्रतिनिधित्व करने वाली) वह ऊर्जा अपने धुंधले स्वरूप के साथ काम करती रही तथा फिर उसके असर में पैशाची, जादूटोने तथा तामसिक कृत्यों के मामले बढ़ते गए जिसके कारण इन में संलग्न लोग दुख तथा जीवन एवं सौंदर्य के विनाश कर आनंद बटोरते गए। किन्हीं आदिवासी समाजों तथा सभ्यताओं में ऐसा भी हुआ कि अपराधियों को मारने तथा मरने वालों के बीच विभक्त कर देने का चलन।

किंतु शेष मामलों में लोगों ने विज्ञान तथा प्रगति के मार्ग खोजे और अपनाए, जो कि उस अतार्किक चलन, उस धुंधलेपन तथा दमन के विरुद्ध थे।

5. कुछ आदिम समाजों के साथ-साथ तथाकथित 'उन्नत सभ्यताओं' में आज भी सेक्स के दमन का चलन व्याप्त है। जबकि दोनों ही मामलों में ऐसे चलन की शुरुआत की परिस्थितियां अलग-अलग रही होंगी, इसमें कोई दुविधा नहीं है कि दोनों ही के मामले में बड़ी मात्रा में हानि के लक्षण विद्यमान रहते हैं।
6. यदि मुझसे और खुलकर व्याख्या करने को कहा जाएगा, तो मैं कहूंगा कि 'सेक्स' असल में एक पवित्र चीज है जहां से जीवन उत्पन्न होता है तथा जो प्रत्येक रचनाशीलता का केंद्र है। साथ ही, जब इसकी संक्रिया ठीक प्रकार से पूरी नहीं हो पाती, तो हर प्रकार का विनाश भी इसी से आविर्भूत होता है।
7. जब भी कोई सेक्स को घृणित या कुत्सित कृत्य साबित करने की कोशिश करे, तो जीवन में विष फैलाने वाले ऐसे लोगों पर कभी भी विश्वास न करें। इसके उलट, इसमें सौंदर्य का समावेश होता है तथा इसका प्रेम की सर्वोत्तम भावनाओं से जुड़ा होना कतई कोई निरर्थक चीज नहीं।
8. इसलिए सावधान हो जाएं और इसे उस एक महान और अनोखी चीज की तरह लें जिसे अंतर्विरोधों का स्रोत अथवा महत्वपूर्ण ऊर्जा को व्यर्थ जाने देने वाला कारक मानने की बजाय उसके साथ सौम्यता का व्यवहार किया जाए।

XVIII. ऊर्जा का प्रभाव तथा प्रतिक्रिया

जैसा कि मैं पहले ही बता चुका हूँ: ''जब आपको अपने हृदय में बड़ी ऊर्जा, खुशी तथा अच्छाई का समावेश होता दिखे अथवा जब आप स्वतंत्र तथा अंतर्विरोधों से मुक्त महसूस करें, तब तुरंत अपने अंतस् को धन्यवाद कहें।''

1. 'धन्यवाद' का आशय किसी बिंब(कल्पना), किसी पर्तीक से जुड़ी सकारात्मक आभा का संकेंद्रण से है। इस प्रकार संबद्ध यह सकारात्मक आभा विपरीत परिस्थितियों में एक चीज का आह्वान करते हुए उस दूसरी चीज को स्थापित करने की कोशिश करती है जो अतीत के क्षणों में उसकी सहचरी थी। इसके अलावा बार-बार घटित होने के कारण वह मानसिक 'बोझ' और भारी हो सकता है, जिस स्थिति में वह (सकारात्मक आभा) विशिष्ठ परिस्थितियों द्वारा जनित विशेष नकारात्मक भावनाओं का शमन करने में सक्षम होगी।
2. इसलिए, अनेकश: सकारात्मक अवस्थाओं में जुटाई वह आभा पुकारने पर हर बार आपके अंतस् से आपके हित में वृहत्तर होकर लौटेगी। तथा मेरे हिसाब मुझे अब यह दुहराने की जरूरत नहीं है कि इस प्रक्रिया का इस्तेमाल (भ्रामक तरीके से) बाहरी वस्तुओं तथा व्यक्तियों को ''साधने'', अथवा इस विश्वास के साथ आंतरिक सत्ताओं का बाह्यीकरण करने में होता रहा है कि वे उनकी गुहार तथा प्रार्थनाओं को सुनेंगी।

XIX. अंतस् की अवस्थाएं

अब तक आपके भीतर उस आंतरिक अवस्था के बारे में धारणा पुख्ता हो चुकी होगी, जिस तक आप पूरे जीवन, और खास तौर पर अपने व्यक्तिगत विकास से जुड़े प्रयासों के पूरे काल में पहुंचते रह सकते हैं। इसकी व्याख्या करने के लिए मेरे पास उपमाएं (इस मामले में दृष्टांत) देने के सिवाय और कोई तरीका नहीं है। मेरे हिसाब से इनके अंतर्गत मनोदशाओं की उलझी अवस्थिति को ''दृश्यात्मक रूप से'' संकेंद्रित करने का गुण विद्यमान होता है। वहीं दूसरी तरफ, उन्हें एक ही प्रक्रिया के अलग-अलग क्षण मानकर ऐसी अवस्थाओं को जोड़ने के अनोखेपन के चलते ऐसा करने वालों द्वारा हमारे सामने हमेशा से खंडित रूपों में पेश किए जाने विवरणों, जिसके कि हम आदी हैं, के बीच कुछ नयापन दिख सकेगा।

1. पहली अवस्था, जिसमें 'अर्थहीनता' (जिस पर हम पहले चर्चा कर चुके हैं) प्रबल होती है, को ''प्राणशक्ति छिन्न–भिन्न'' होना कहा जाएगा। इसमें हर चीज के केंद्र में शारीरिक जरूरतें होती हैं लेकिन वे प्राय: परस्पर विरोधी लालसाओं तथा कल्पनाओं के बीच भ्रम की स्थिति में होती हैं। इसमें उद्देश्य तथा कार्यकलाप, दोनों ही अनैतिक प्रकार के होते हैं। विभिन्न रूपों में छुपी हुई इस अवस्था में वृद्धि होती रहती है। इस बिंदु से सिर्फ दो मार्ग ही निकल सकते हैं: मृत्यु का मार्ग अथवा आमूल परिवर्तन का मार्ग।
2. मृत्यु की तरफ जाने वाला मार्ग आपको अंधकार तथा अराजकता के धरातल पर जा छोड़ता है। पुराने समय के लोगों को उस मार्ग का ज्ञान था तथा वे उसे प्राय: 'पृथ्वी के नीचे' अथवा पाताल की गहराईयों की संज्ञा देते थे। कुछ लोगों ने उस उस सत्ता के दर्शन भी किए ताकि बाद में उसकी जगह प्रकाशमान सत्ता का ''पुनरुत्थान'' कर सकें। इससे यह सहज निष्कर्ष निकलता है कि

मृत्यु से नीचे की अवस्थिति प्राणशक्ति का छिन्न–भिन्न होना होता है। मानव मष्तिष्क संभवत: ऐहिक विनाश का संबंध मृत्यु के बाद के कायांतरण की प्रक्रियाओं से जोड़ता है तथा छिन्न-भिन्न होने का संबंध जन्म से। यदि आपकी दिखा सोपान पर ऊपर चढ़ने की है, तो मृत्यु का अर्थ आपके पहले की अवस्थिति से अलगाव भर है। मृत्यु के रास्ते आप अगली अवस्था में प्रवेश करते हैं।

3. वहां पहुंचकर आपको ऐसा ठिकाना मिलता है जहां से वापसी संभव हो। वहां से आगे के लिए दो रास्ते खुलते हैं: एक रास्ता पश्चाताप का तथा दूसरा वह जिससे चढ़कर आप वहां तक पहुंचे होते हैं, यानी वापस मृत्यु का। पहले मार्ग को चुनने का मतलब अपने पूर्व जीवन से संबंध तोड़ लेने का प्रयास होता है। यदि आप वापस मृत्यु का मार्ग लेना चाहते हैं, तो पुन: बंद घेरे की अनुभूति के साथ आप नीचे खाई की ओर गिरने लगते हैं।
4. अब, जैसा कि मैंने कहा कि आपके पास उस महापतन से बचने का एक और उपाय कायांतरण होता है। आप इस मार्ग का चयन इसलिए किए होते हैं कि आप उसके कुछ स्पष्ट फायदों को हाथ से जाने दिए बिना अपनी दर्द की अवस्था से मुक्ति पाना चाह रहे होते हैं। लेकिन यह एक झूठा मार्ग होता है जिसे ''धूर्त चाल'' कहते हैं। उस कुटिल मार्ग से अनेक दैत्य निकलते रहे हैं। वे अपने नर्क को छोड़े बिना स्वर्ग के अपमान चेष्टा करते रहे हैं, और इस प्रकार, दुनिया में अगणित अंतर्विरोधों का कारक बने हैं।
5. मान लें कि मृत्यु की सत्ता तथा अपनी निरंतर ग्लानि से ऊपर चढ़ते हुए आप एक मार्ग चुनने वाले ठिकाने तक पहुंच जाते हैं। उस ठिकाने को 'संरक्षण' तथा 'निराशा' के दो दुर्बल कुंडों ने किनारों से पकड़ रखा है। 'संरक्षण' वाला कुंडा छल तथा अस्थायित्व वाला है। उसकी तरफ से गुजरने पर आपको अपनी नश्वरता का विचार फलीभूत होता दिखता है किंतु आप तेजी से पतन के शिकार हो रहे होते हैं। यदि आप 'निराशा' वाले पथ

का चयन करते हैं, तो चढ़ना तो आपके लिए कठिन होता है, लेकिन एक यही मार्ग है जो सच्चा होता है।

6. एक के बाद दूसरी असफलता को जीतते हुए आप उस विश्राम स्थल के करीब तक पहुंच जाते हैं जिसे ''भटकाव का स्थल'' कहते हैं। आगे के लिए मिलने वाले रास्तों के प्रति सावधान हो जाएं: या तो दृढ़ निश्चय वाला मार्ग चुनें, जो आपको सृष्टि तक पहुंचाएगा अथवा अपमान का रास्ता चुनें, जो आपको एक बार फिर से वापसी का अवसर प्रदान कराता है। यहां आपका सामना भ्रम की स्थिति से होता है: आपको या तो चेतस् जीवन की भूल-भुलैयानुमा मार्ग (जिसे आप दृढ़ प्रतिज्ञा से चुनते हैं) को चुनना है या फिर विद्वेष से भरे अपने पूर्व जीवन में वापस लौट जाना है। ऐसे असंख्य लोग हैं जो वहां पहुंचकर अपनी संभावना सुनिश्चित कर पाने में असफल रहे हैं।

7. लेकिन आप यदि दृढ़ इरादे के साथ उत्थान के मार्ग पर बढ़ते जाते हैं तो आगे आपको 'सृष्टि' नामक सराय मिलेगी। सामने तीन दरवाजे होंगा: जिनके नाम क्रमश: ''पतन'', ''इच्छाशक्ति'' तथा ''अधोगति'' होंगे। ''पतन'' नामक दरवाजा आपको सीधे गहराइयों में ले जाने वाला होगा तथा आपको उसमें झोंकने वाली चीज कोई बाहरी दुर्घटना ही होगी। उस दरवाजे का चुनाव आप शायद ही करें। जबकि ''अधोगति'' वाला मार्ग आपको अप्रत्यक्ष तरीके से उन गहराइयों में ले जाएगा। विभिन्न सर्पिल एवं जटिल मार्गों से उतरते हुए, जिन पर आपको खोया और गंवाया हुआ सबकुछ पुन: दिखता रहेगा। ''अधोगति'' के जरिए होने वाली चेतना की यह परीक्षा असल में झूठी परीक्षा होती है, जिसमें आप तुलना की जा रही चीजों का आंकलन कमतर और असंगत तरीके से करते हैं। आप उत्थान के अपने प्रयासों की तुलना उन ''फायदों'' से करते हैं जिन्हें आप पीछे छोड़ आए हैं। लेकिन यदि आप चीजों को और अधिक करीब से देखेंगे तो पाएंगे कि आपने उन चीजों को इस उद्देश्य की

बजाय किन्हीं और कारणों से छोड़ा था। इस तरह अधोगति की शुरुआत उन लक्ष्यों की विकृति के रूप में होती है जो उत्थान के मार्ग पर अग्रसर होते समय कहीं थे ही नहीं। अब मैं पूछना चाहता हूँ: मष्तिष्क के साथ यहां कौन छल कर रहा होता है? शायद आरंभिक उत्साह के झूठे उद्देश्य? शायद उद्यम के दौरान आने वाली कठिनाइयां? शायद उन गंवाई हुई चीजों की झूठी स्मृतियां, जो वास्तव में कभी रही ही नहीं हों अथवा जो किन्हीं और उद्देश्यों से प्रेरित रही हों? अब मैं आपसे कहता और पूछता हूँ: आपका घर काफी पहले जल गया। आपने इसीलिए उत्थान का यह मार्ग चुना, कि अब आप यह सोचेंगे कि उत्थान का यह मार्ग चुनने के कारण आपका घर जला। शायद आपने एक दृष्टि आस पास के घरों के हाल पर भी डाली हो?... इसमें कोई दो राय नहीं, आपको बीच के दरवाजे का चयन करना है।

8. आपको इच्छाशक्ति के सीढ़ीदार रास्ते से चढ़ते हुए एक अस्थिर गुंबद तक चढ़ जाना होगा। वहां से तेज हवादार संकरे रास्ते, जिसे आप ''बातूनी रास्ते'' के रूप में याद कर सकते हैं, से गुजरते हुए आप एक विस्तृत खाली मैदान (प्लेटफार्म जैसा) तक पहुंचेंगे जिसे 'ऊर्जा के खुले मैदान' के नाम से जानते हैं।
9. इस मैदान में आप अनंत तक फैले वीरानेपन तथा डरावनी शांति के बीच अति विशाल स्थिर तारों से भरी रात से भयभीत हो सकते हैं। वहां, आपके सिर के ठीक ऊपर नभ में काले चांद का उकसावे वाला रूप दिखाई देता है... एक सूर्य को ढंककर टिका एक ग्रहण लगा हुआ अनोखा चांद। वहां आप विश्वास के साथ उसके उदय की धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करते रह सकते हैं, क्योंकि यदि आप शांति से प्रतीक्षा करते रहें, तो कुछ भी बुरा नहीं घटित होगा।
10. ऐसा भी संभव है कि आपका तुरंत ही वहां से बचकर निकलने के प्रबंध करने का मन हो जाए। यदि ऐसा होता है, तो समझदार की भांति आप दिन के उगने की प्रतीक्षा किए बगैर

वहां से किसी भी जगह तक टोह लेते हुए जा सकते हैं। आपको याद रखना चाहिए कि वहां (अंधेरे में) तय की गई हरेक दूरी झूठी होती है तथा उसे ''तात्कालिक उपाय'' की संज्ञा दी जाती है। यदि, मेरी अभी बताई जा रही बातों को भूल जाते हुए अपने ही अनुसार कोई रास्ता चुनने लगते हैं, तो मेरी बात की गांठ बांध लीजिए कि आप एक बवंडर के द्वारा रास्तों और ठिकानों के बीच के सबसे अंधेरे गह्वर में छिन्न-भिन्न से फेंक दिए जाएंगे।

11. यह समझना कितना कठिन है कि आंतरिक अवस्थाएं एक दूसरे से जुड़ी हुई होती हैं। यदि आप चेतना के अटल तथ्यों पर गौर करें तो आप महसूस करेंगे कि बताई गई परिस्थितियों में, जो आंखें मूंदकर कामचलाऊ तरीके के प्रबंध करता जाता है, वह भयंकर तरीके के पतन का शिकार हो जाता है; फिर उसमें हताशा की भावनाएं घर करने लगती हैं और वह अपनी कल्पनाओं के सभी मुकाम को भूलते जाते हुए मृत्यु तथा अधोगति को प्राप्त करता है।
12. यदि उस उस विशालकाय मैदान में पहुंचकर आप दिन निकलने तक प्रतीक्षा कर लेते हैं, तो आपकी आंखों के सामने से उजले सूर्य का आगमन होगा तथा इस प्रकार पहली बार वास्तविकता से आपका साक्षात्कार होगा। फिर आप देखेंगे कि जो कुछ भी अस्तित्व में है, उसके पीछे एक योजना रही है।
13. इस मुकाम से वापस गिरना, आम तौर पर, मुश्किल है, जब तक की आप अपनी इच्छा से प्रकाश को अंधकार से मिलाने के उद्देश्य से अंधेरे हिस्सों में न जाना चाहें।

इस समस्या पर अब और अधिक बात करने का कोई फायदा नहीं क्योंकि अनुभवहीनता की स्थिति में संभाव्य काल्पनिकता के धरातल तक ले जाए जाकर आप छले जा सकते हैं। अब तक जो बताया गया, उसका उद्देश्य क्या रहा? यदि यहां वर्णित चीजें यदि आपको स्पष्ट न हुई हों, तो भी आपत्ति दर्ज करने का कोई लाभ न होगा,

क्योंकि यहां का कोई स्पष्ट आधार तथा कारण अस्तित्व में ही नहीं हैं, जहां सब दर्पण के प्रतिबिंब, गूंज की प्रतिध्वनि, छाया की छाया सरीखा है।

XX. अंतस् की वास्तविकता

1. मेरे सुझावों पर ध्यान दें। उनमें आपको सिर्फ बाहरी दुनिया के भूखंडों तथा लाक्षणिक दृश्यों का अंतराभास करना है। लेकिन उनमें मानस जगत का वास्तविक वर्णन भी विद्यमान है।
2. आपको इस पर भी विश्वास नहीं होगा कि आप चलते हुए जिन ''जगहों'' से गुजरते हैं, उनका कोई स्वतंत्र अस्तित्व भी होता होगा। ऐसी दुविधाएं प्राय: गूढ़ उपदेशों को धूमिल कर देती रही हैं तथा आज भी कुछ लोग समझते हैं कि ''ज्ञान प्राप्त कर चुके लोगों'' को स्वर्ग, नर्क, देवदूतों, असुरों, दैत्यों, महान किलों, दूरस्थ नगर आदि अपने वास्तविक अस्तित्व में दिखाई देते हैं। बिना किसी ज्ञान के कयास लगाने वाले लोग भ्रम तथा बुखारग्रस्त मष्तिष्क के प्रभाव में ठीक इसकी उल्टी व्याख्या के साथ ऐसे ही पूर्वाग्रह से ग्रस्त होते हैं।
3. मैं एक बार फिर से दुहराना चाहूंगा कि आपको यह समझना होगा कि यह सभी वास्तविक मनोदशाएं हैं, जिनका निरूपण गोचर जगत में व्याप्त चीजों के प्रतीकों के सहारे किया गया है।
4. बताए हुए को ध्यान में रखें तथा प्रतीक दृश्यों के पीछे की वास्तविकता को खोजने का प्रयास करें जो कभी कभार मष्तिष्क को भटकाती हैं लेकिन अन्य अवसरों पर बिना उन प्रतीकों के यथार्थ का बोध असंभव हो जाता है।

   जब मैंने देवताओं के उस नगर की बात की, जहां विभिन्न ग्रामीण-जन के अनेक नायक पहुंचना चाहते थे; खास तौर पर स्वर्ग से जुड़ी उन बातों के समय में जब देवता और और मनुष्य एक रूपांतरित किंतु मूलभूत पर्कृति में एक साथ रहते थे; पतन तथा छिन्न-भिन्न होने की बातों के दौरान महान अंतर्सत्य का उद्घाटन हुआ।

बाद में उद्धारक अपने संदेश लेकर आए और उस स्मृति स्वरूप वाली उस खोई हुई सत्ता को पुन: स्थापित करने के उद्देश्य से हम तक दोगुनी स्वाभाविकता के साथ पहुंचे।

हालांकि जब उस समूचे सत्य को मष्तिष्क के बाहर लाकर अभिव्यक्त करने की बारी आई, तब वे या तो गतल बताते गए या फिर झूठ बोले।

इसके उलट, आंतरिक दृष्टि के कारण भ्रम का शिकार हो गए बाहरी जगत के पास नए पथ की तलाश में भागने का विकल्प शेष रह गया।

यही कारण है कि आज के युग का नायक सितारों के बीच तक उड़ान भर रहा है। उन आसमानों के ऊपर की उड़ान, जो अतीत में उपेक्षित रहे।

वह अपनी दुनिया से बाहर तक उड़ान भरता रहता है, इस बात से अनजान, कि ऐसा करता हुए वह प्रकाश के केंद्र की ही दिशा में अग्रसर है।

नोट

आंतरिक दृष्टि कुल 20 शीर्षकों में विभक्त है तथा उनमें से प्रत्येक शीर्षक कुछ खंडों में। इस पुस्तक के महत्वपूर्ण उद्देश्यों का इस प्रकार समूहन किया जा सकता है:

क. आरंभिक दो शीर्षक परिचयात्मक प्रकार के हैं तथा व्याख्या करने वाले के उद्देश्य, उससे लाभान्वित होने वालों के व्यवहार तथा दोनों के बीच के संबंध को आगे बढ़ाने के तरीके को प्रस्तुत करते हैं।

ख. III से XIII तक के शीर्षकों के अंतर्गत दस दिनों के ध्यान के जरिए व्यापक मुद्दों को आगे बढ़ाया जाएगा।

ग. शीर्षक XIII से आगे एक बदलाव देखने को मिलेगा। सामान्य विवरण से आगे बढ़ते हुए जीवन के प्रति नजरिए तथा बर्ताव पर बातचीत होने लगेगी।

घ. आगे के शीर्षक आंतरिक गतिविधियों पर केंद्रित होंगे। इस संदर्भ में विषयों का क्रम इस प्रकार का होगा।

   I. ध्यान- पुस्तक का उद्देश्य: अर्थहीनता का सार्थकता में परिवर्तन
   II. समझने की इच्छा – विषयों को समझने के लिए आवश्यक मानसिक स्थिति।
   III. अर्थहीनता – जीवन तथा मृत्यु के अर्थ
   IV. निर्भरता- मानवमात्र की मध्यममार्गीय गतिविधियां
   V. आशय से जुड़ा संदेह- कुछ असामान्य मानसिक तथ्य
   VI. स्वप्न तथा जागरण - वास्तविकता की चेतना तथा धारणा (स्वप्न, अर्धस्वप्न, चेतस स्वप्न तथा पूर्ण चेतना) के बीच अंतर। बाह्य, आंतरिक तथा स्मृति आधारित चेतना।

VII. ऊर्जा की उपस्थिति- चेतना के दौरान समझ का विकास। ऊर्जा अथवा शक्ति, जो शरीर के भीतर घूमती ही रहती है।

VIII. ऊर्जा का नियंत्रण – चेतना के स्तरों से जुड़ी ऊर्जा की गहराई तथा सतहीपन।

IX. ऊर्जा का प्रदर्शन – ऊर्जा का नियंत्रण तथा अनियंत्रण

X. सार्थकता का प्रमाण – आंतरिक विरोधाभास, एकीकरण तथा निरंतरता

XI. प्रकाशमान अंतस् – संबद्ध ऊर्जा

प्रकाशमान अंतस् के आंतरिक दृष्टांत के तौर पर आंतरिक एकीकरण की प्रक्रिया ''प्रकाश के सहारे आगे बढ़ती है''। आंतरिक विघटन को ''प्रकाश से दूर जाने'' के तौर पर दर्ज किया जाता है।

XII. अन्वेषण- ऊर्जा का गतिमान रहना। स्तर। ''प्रकाश'' के रूप में निरूपित ऊर्जा का स्वभाव। इन विषयों के मामले में संबद्ध ग्रामीण-जन के उदाहरण।

XIII. आरंभ- आंतरिक ईकाई के संदर्भ के रूप में आरंभ

XIV. आंतरिक पथ का प्रदर्शक- ''पतन'' अथवा ''उत्थान'' के मार्ग से से संबद्ध प्रकियाओं का निरूपण।

XV. शांति की अनुभूति तथा ऊर्जा का पथ – प्रक्रिया।

XVI. ऊर्जा का विस्तार – विस्तार की अनुभूति

XVII. ऊर्जा का लोप तथा नियंत्रण- ऊर्जा का अध:भारण। ऊर्जा के केंद्रीय उत्पादक के रूप में सेक्स

XVIII. ऊर्जा की क्रिया एवं प्रतिक्रिया- भावनात्मक आवेशों के निरूपण का संबंध। भावुकता वाली स्थिति से संबद्ध दृश्यों का आह्वान, संबद्ध भावनात्मक अवस्थाओं का

(पुन:) नए तरीके से मिलना। दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाली भावनात्मक अवस्थाओं से संबद्ध दृश्यों से जुड़ने की तकनीक के रूप में ''धन्यवाद''।

XIX. आंतरिक अवस्थाएं- आंतरिक गतिविधियों में रुचि रखने वाले लोग जिन मानसिक स्थितियों में हो सकते हैं।

XX. अंतस् की वास्तविकता- बाहरी दुनिया के दृष्टांतों के निरूपण से जुड़ी मानसिक प्रक्रियाएं।

संदेश

सिलो के शब्द

गतिविधि का केंद्र

पार्केस दे एस्तूदियो ई रेफ्लेक्सिओन, पुंता दे बाकास, अप्रैल 2008

(तीसरा प्रसारण; silo.net)

आज हम खास तौर पर पूरी दुनिया के विभिन्न परिसरों में इकट्ठा हुए संदेशवाहकों को संबोधित करने जा रहे हैं। हमारी बातों में संदेश के सबसे व्यापक गुणों का समावेश होना जरूरी होगा।

'संदेश' की भूमिका

हम अपनी बात की शुरूआत 'संदेश' की भूमिका बात करने से करेंगे जो सन् 1969 में दो ईकाइयों में सामने आई थी। उनमें से पहली चीज ''आंतरिक दृष्टि'' नामक किताब है जिसका लेखन 1969 में इसी जगह, पुंता दे बाकास, में शुरू हुआ और जो पहली बार सन् 1972 में संपादित हुई। दूसरी भूमिका एक भाषण, एक व्याख्यान है, जो ''कष्टों के निदान का प्रबोधन'' नाम से जाना जाता है तथा जो 4 मई 1969 को इसी जगह दिया गया था।

यह सामग्री विभिन्न स्वरूपों में प्रसारित होती रही तथा अलग-अलग शीर्षकों तथा किताबों के अंतर्गत प्रकाशित होने वाली पूरक सामग्री इसमें जुड़ती रही तथा अंतत:

लेखक की संपूर्ण रचनावली के खंड तैयार हो सके। मुझे लगता है कि यह कहना सही होगा कि प्रस्तुत रचनावली संयोजनों के एक समुच्चय तथा उक्त दोनों भूमिकाओं के ही विषयवार विस्तार से अधिक कुछ नहीं। इस तरह से, यद्यपि इस रचनावली को विभिन्न साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा अन्य विषयों के बीच बांटा जा सकता है, विभिन्न प्रकार के संवर्धनों का मूल मुख्य रूप से उक्त दोनों भूमिकाएं ही रह जाएंगी। अत: विभिन्न लेख तथा अलग-अलग प्रकार के जन-हस्तक्षेप पहले बताए हुए स्वरूप का ही विकास तथा व्याख्याएं हैं।

कुछ ही समय पहले पहली बार सन् 2002 में एक खंड के रूप में 'सिलो के संदेश' शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित संदेश सामने आया।

यह लिखित सामग्री भीतर से तीन हिस्सों में बंटी है:
पुस्तक, अनुभव तथा मार्ग।

''पुस्तक'', दरअसल 'आंतरिक दृष्टि' है। ''अनुभव'' ''संदेश'' के अंतर्गत आठ रीतियों में वर्णित व्यावहारिक हिस्सा है। और आखिर में ''मार्ग'' सुझावों एवं चिंतन का एक संकलन है।

अब ''संदेश'' तथा भूमिका से जुड़ी बातों को विराम दिया जा सकता है। हालांकि मैं ''कष्टों के निदान के प्रबोधन'' के कुछ बिंदु पर अल्प समय के लिए रुकना चाहूंगा, जो कि एक संदर्भ जैसा है तथा जिसने व्यक्तिगत के साथ-साथ सामाजिक रूप से अहम मुद्दों जैसे दर्द और दुख के बीच अंतर आदि की व्याख्या को संभव किया है।

प्रबोधन 'कष्टों के निदान' की भूमिका

प्रबोधन में जीवन के लिए सबसे महत्वपूर्ण ज्ञान का संबंध दुख के समझने तथा उस पर विजय प्राप्त करने से है। शारीरिक दर्द तथा मानसिक दुख के बीच अंतर करना अहम होता है।

दुख से तीन प्रकार से गुजरना होता है: धारणा के दुख, स्मृति के दुख तथा कल्पना से जुड़े दुख। दुख हिंसा को उजागर करत है तथा हिंसा का संबंध भय से होता है। जो पास है, जो खो चुका है या फिर जिसे पाने की लालसा है, उन सबके खोने का भय। दुख का कारण किसी चीज का पास नहीं होना, या फिर कोई सामान्य प्रकार का भय, रोग से भय, गरीबी का भय, अकेले पड़ जाने का भय तथा मृत्यु का भय होता है। हिंसा के मूल में लालसा होती है। लालसाएं सबसे बड़ी महात्वाकांक्षाओं से लेकर सबसे सामान्य प्रकार की सच्ची इच्छओं तक विभिन्न प्रकार एवं कोटियों वाली हो सकती हैं।

इस बिंदु पर आंतरिक ध्यान का व्यवहार करके मनुष्य अपने जीवन को नई दिशा दे सकता है।

लालसा हिंसा को जन्म देती है, जो मनुष्य के भीतर तक सीमित न रहते हुए संबंधों के माध्यम को दूषित करती है।

यहां हिंसा के प्राथमिक स्वरूप यानी शारीरिक हिंसा मात्र की बजाय हिंसा के विभिन्न स्वरूपों पर भी बात देखने को मिलेगी। निश्चित तौर पर आर्थिक, जातीय, धार्मिक, लैंगिक, मनोवैज्ञानिक, नैतिक तथा कमोबेश मात्रा में अन्य प्रकार की हिंसाओं का भी अस्तित्व होता है।

[कष्टों के निदान के प्रबोधन के हिस्से: ''मनुष्य के भीतर हिंसा... दुनिया से हिंसा को समाप्त करने का कोई छोटा मार्ग नहीं है।'']

इस 'प्रबोधन' में जीवन को चलाने वाले सामान्य आचरण की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। साथ ही यह भी बताया गया है कि तकलीफों के निदान के लिए विज्ञान और न्याय भी जरूरी हैं। लेकिन मानसिक दुख से मुक्ति के लिए आदिम लालसाओं पर विजय प्राप्त करना आवश्यक होता है।

इस 'प्रबोधन' से ही उठकर विभिन्न पहलुओं का विस्तार विभिन्न पुस्तकों जैसे 'पृथ्वी का मानवीकरण करते हुए', 'मेरे दोस्तों को खत', 'मानवता का शब्दकोश तथा सिलो कहता है', तथा ''उपयुक्त कर्म'', ''जीवन का अर्थ'', ''मानवता एवं नया विश्व'', ''सभ्यता की त्रासदी और मानवता'', ''आज वैश्विक मानवता को कैसे समझते हैं?'' जैसी प्रदर्शनियों आदि तक में हुआ है।

‘आंतरिक दृष्टि’ पुस्तक की भूमिका

दूसरी भूमिका, ‘‘आंतरिक दृष्टि’’ जीवन के अर्थ के बारे में बात करती है। जिस खास मुद्दे के इर्द-गिर्द यह घूमती है, वह अंतर्विरोध की मनोवैज्ञानिक अवस्था है। यहां स्पष्ट किया गया है कि अंतर्विरोधों का हिसाब कष्टों के रूप में होता है तथा मा नसिक कष्ट पर विजय पाना उसी अनुपात में संभव है जितना सामान्य जीवन में, तथा खास तौर पर दूसरों से सं बंधित अंतर्विरोधों से रहित गतिविधियों में प्रवृत्त होना हो।

इस पुस्तक में सामाजिक तथा व्यक्तिगत आध्यात्मिकता तथा एक मनोविज्ञान एवं एक विस्तृत प्रकार के नृविज्ञान के बीज हैं, जो कल्पनाओं के मनोविज्ञान की किताबों से लेकर पूरे विश्व के मिथकों तक जाते हैं। इसकी झलक ‘‘मानव के बारे में’’, ‘‘आज की दुनिया में धर्म’’ तथा ‘‘ईश्वर का मूल विषय’’ सरीखे जन-हस्तक्षेपों में भी मिलती है। वहां ‘‘आंतरिक दृष्टि’’ से नई बातें तथा अनुप्रयोग भी उत्पन्न कर लिए गए हैं।

यह स्पष्ट है कि हम सिलो के ‘‘संदेश’’ के संबंध में जिस भूमिका का उल्लेख कर रहे हैं वे खास तौर पर दूसरे तथा तीसरे हिस्से में परस्पर मिले हुए तथा एक दूसरे में व्याप्त हैं क्योंकि ‘आंतरिक दृष्टि’ वाले हिस्से में भूमिका के पहले हिस्से का सीधा अनुलेखन दिखाई देता है।

साहित्यिक कृतियों में कथाओं में निर्देशित अनुभवों की ही भांति यह अनुलेखों, यह स्पष्टीकरण (अनुवाद) प्रतीत होते हैं: यहां गल्प तथा कथाएं, या ‘‘स्वप्न तथा गतिविधि’’ अथवा ‘‘बोर्मासो का जंगल’’ में मनोविज्ञान के वैसे सशक्त मुद्दे देखने को मिलते हैं जिनका जिक्र शुरू से ही चर्चा की जारी भूमिकाओं में होता रहा है।

इन संक्षिप्त शब्दों के साथ अपनी बात पूरी करने के क्रम में मैं कहना चाहूंगा कि ‘संदेश’ व्यक्तिगत के साथ-साथ सामाजिक आध्यात्मक की अभिव्यक्ति है, जो कि समय बीतने के साथ अनुभवजनित सत्य को प्रमाणित करता चलता है तथा अपने आप में विभिन्न संस्कृतियों, राष्ट्रीयताओं, सामाजिक तथा पीढ़ीगत स्तरों का

समावेश व उद्घाटन करता है। इस प्रकार के सत्य के संचालन तथा विकास के लिए किसी धर्मसिद्धांत अथवा किसी प्रकार के सुनियोजित एवं तय प्रारूप की जरूरत नहीं है। इसीलिए महसूस करने तथा दूसरों तक संदेश पहुंचाने वाले पैगंबर अथवा संदेशवाहक हमेशा ही विचारों तथा मान्यताओं की स्वतंत्रता पर बंदिश के स्वीकार न किए जाने तथा प्रत्येक मनुष्य के साथ उसकी इच्छानुसार बर्ताव करने पर जोर देते हैं। ठीक वहीं अंतर्वैयक्तिक तथा सामजिक संबंधों की यह इगेनवैल्यू पैगंबरों को हरेक प्रकार के भेद-भाव, असमानता तथा अन्याय के विरूद्ध कार्यरत रहने को प्रवृत्त करती है।

सिलो

लेखक का परिचय

मारियो लुइस रोद्रिगेस कोबोस, जिन्हें 'सिलो' उपनाम से भी जाना जाता है, का जन्म 6 जनवरी 1938 को मेंदोसा (अर्जेंटीना) में हुआ।

लेखक तथा चिंतक, अनेक पुस्तकों का लेखन किया।

'यूनिवर्सलिस्ट ह्यूमेनिज्म' अथवा 'न्यू ह्यूमेनिज्म' धारा के विचारों के संस्थापक।

दुनियावी कष्टों से उबरने के एक मात्र रास्ते के तौर पर अहिंसा की कार्य-पद्धति का प्रतिपादन करते हैं। साथ ही साथ वैयक्तिक एवं सामाजिक उत्थान के लिए भी कार्यरत रहते हैं।

'सिलो के संदेश' पुस्तक में वे अपने विचारों की स्वतंत्र व्याख्या तथा स्वतंत्र व्यवस्थापन का आह्वान करते हैं।

उनके प्रतिपादित सिद्धांतों में शारीरिक दर्द तथा मानसिक कष्टों पर विजय पाने के निर्देश दिए गए हैं।

सिलो का देहांत 16 सितंबर, 2010 को उनके गृह नगर मेंदोसा के चाक्रास दे कोरिआ स्थित उनके घर में हुआ।

लेखक की अन्य कृतियां:

www.silo.net

कष्टों का निदान

इस प्रबोधन में उस सरल आचरण की बात की गई हे जो जीवन को संचालित करे; तथा यहां इस बात का भी जिक्र है कि दर्द पर विजय प्राप्त करने के लिए विज्ञान और न्याय भी जरूरी चीजें हैं, लेकिन मानसिक कष्टों से मुक्ति के लिए आदिम लालसाओं का दमन अति आवश्यक है।

आंतरिक दृष्टि

यहां जीवन के अर्थ की बात की गई है। इसके अंतर्गत जिस प्रमुख विषय पर विमर्श किया गया है वह अंतर्विरोधों का मनोविज्ञान है। यहां स्पष्ट किया गया है कि अंतर्विरोधों का हिसाब कष्टों के रूप में होता है तथा मा नसिक कष्ट पर विजय पाना उसी अनुपात में संभव है जितना सामान्य जीवन में, तथा खास तौर पर दूसरों से सं बंधित अंतर्विरोधों से रहित गतिविधियों में प्रवृत्त होना हो।